महर्षि दयानन्द पृष्ठ 3 से 51

ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत चमत्कार

एक पुरातन ऋषि का दिव्य जन्म

परमपिता परमात्मा की विचित्रता से युक्त, अद्भुत और विलक्षण सृष्टि का उद्घाटन पूज्यपाद गुरुदेव शृङ्गी ऋषि कृष्णदत्त जी महाराज के प्रवचनों से हुआ। वह ईश्वर का एक अलौकिक और दिव्य प्रकटीकरण है और सृष्टि के इतिहास की एक मात्र, विलक्षण अद्भुत घटना भी। जब 14 सितम्बर सन् 1942 को, उत्तर प्रदेष के गाजियाबाद जिले के, ग्राम खुर्रमपुर, सलेमाबाद में एक विषेष बालक ने जन्म लिया। बालक जन्म से ही एक विलक्षणता से युक्त था और विलक्षणता यह कि जब भी यह बालक सीधा, शवासन की मुद्रा में, कुछ अन्तराल लेट जाता या लिटा दिया जाता, तो बालक की गर्दन दायें बायें हिलने लगती, लगभग 15 मिनट वेद मन्त्रोच्चारण होता और उसके उपरान्त सृष्टि के आदि काल से वर्तमान काल तक के विभिन्न कालों के स्वयं और विभिन्न ऋषि मुनियों के चिन्तन और घटनाओं पर आधारित 45 मिनट तक एक दिव्य प्रवचन होता। बाल्यावस्था होने के कारण, प्रारम्भ में आवाज अस्पष्ट होती और जैसे जैसे आयु बढ़ने लगी, वैसे वैसे ही आवाज और विषय दोनों स्पष्ट होने लगे।

पर एक अपठित ग्रामीण बालक के मुख से ऐसे दिव्य प्रवचन सुनकर जन मानस आष्चर्य करने लगा, बालक की ऐसी दिव्य अवस्था और प्रवचनों की गूढ़ता के विषय में कोई भी कुछ कहने की स्थिति में नही था। ग्रामीण, निर्धन और अपठित समाज होने के कारण भूत प्रेत का प्रभाव मानते हुए बहुत सी चिकित्सा भी कराई गई, पर सब व्यर्थ रहे। क्योंकि बालक की यह प्रवचन क्रिया तो यौगिक थी यह तो सतत् ऐसे ही चलती रही।

आवाज जब कुछ स्पष्ट हुई तो इस स्थिति का स्पष्टीकरण भी दिव्यात्मा के प्रवचनों से ही हुआ। कि यह आत्मा सृष्टि के आदिकाल से ही विभिन्न कालों में शृङ्गी ऋषि की उपाधि से विभूषित और सतयुग के काल में आदि ब्रह्मा के शाप के कारण इस युग में जन्म लेने का कारण बनी। और इस जन्म में अपठित रहने की स्थिति में भी जैसे ही यह शरीर श्वासन की मुद्रा में जाता तो कुछ अन्तराल बाद स्वतः ही योग समाधि की

स्थिति बन जाती। जहां इस दिव्यात्मा का पूर्व जन्मों का ज्ञान उद्बुद्ध हो जाता और जैसा काल देखा था उस काल के अनुकूल व्याख्यान कण्ठ आ जाते। क्योंकि, जन्म जन्मान्तरों के संस्कार स्मृति में, अन्तःकरण में विराजमान रहते हैं। और अन्तरिक्ष में उपस्थित सूक्ष्म शरीर धारी दिव्यात्माओं के समक्ष एक सत्संग सदृष्य स्थिति बन जाती, जिसमें इस महान आत्मा का सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के लिए प्रवचन होता। जिसमें इस आत्मा के पूर्व जन्मों के षिष्य महर्षि लोमष मुनि महाराज, और पूज्य महानन्द जी के प्रवचन भी होते। क्योंकि इस दिव्यात्मा का स्थूल शरीर यहां मृत्यु लोक में स्थित होने के कारण, वहां अन्तरिक्ष में दिव्य आत्माओं के सम्मुख सत्संग में दिया जाने वाला दिव्य प्रवचन, इस शरीर के माध्यम से यहाँ उपस्थित जन मानस को भी सुनाई देते। इन प्रवचनों में ईष्वरीय सृष्टि का अद्भुत रहस्य समाया हुआ है, ब्रह्माण्ड की विषालता, प्रत्येक लोक में जीवन की अनिवार्यता का बोध, सृष्टि का उद्देष्य, पूर्व कालों में विज्ञान की विषालता का दिग्दर्षन, वैदिक संस्कृति का उज्ज्वलतम स्वरूप, आत्मा, परमात्मा और प्रकृति का स्वरूप, विभिन्न कालों का आँखो देखा सदृष्य वर्णन, भगवान राम और भगवान कृष्ण के जीवन की दिव्यता का साक्षात दर्षन, समाज में प्रचलित रूढ़ियों का निवारण करने वाली दृष्टि, क्या कुछ दिव्य नहीं है इन दिव्य प्रवचनों में ? ये किसी भी मनुष्य को, समाज का और राष्ट्र को उच्च कोटि का जीवन जीने का कारण पैदा करने का सामर्थ्य रखते है।

पूज्यपाद गुरुदेव की 20 वर्ष की अवस्था तक ये प्रवचन ऐसे ही जनमानस को आष्चर्यचकित और उनका मार्गदर्षन करते रहे। परन्तु कुछ प्रबुद्ध महानुभावों ने इन प्रवचनों की इस अमूल्य निधि को सुरक्षित रखने के उद्देष्य से सन् 1962 से (टेप रिकार्ड) संरक्षित करने का निष्चय किया, और यह क्रम पूज्यपाद गुरुदेव के महाप्रयाण 15 अक्टूबर सन् 1992 तक होता रहा।

इस अन्तराल पूज्यपाद गुरुदेव के 1500 प्रवचन, टेप रिकार्ड से संरक्षित किये गये। जिनमें सृष्टि के अनन्तकाल की अमूल्य धरोहर निहित है। हम उनको व्यवस्थित रूप से और अनुसंनधानात्मक दृष्टि से पुस्तकों के रूप में प्रकाषित कर रहे हैं। परमात्मा की

अनुपम कृपा से प्राप्त, इस अमूल्य धरोहर को जन जन तक पंहुचाने के प्रयास में योगदान देने के लिए, प्रत्येक वैदिक धर्मी को सहयोगी बनना चाहिए। जिससे हम सृष्टि के आदि काल से लेकर आधुनिक काल तक की मानव गाथा को सभी के सम्मुख रख सकें। विश्व कल्याणार्थ की भावना से निहित इस महान् ज्ञान की वसुधैव कुटुम्बकम की संस्कृति को प्रसारित कर सकें।

श्रृङ्गी ऋषि वेद विज्ञान प्रतिष्ठान

संसार को तो आर्य ही श्रेष्ठ बनाऐंगे। परन्तु आर्य कहते किसे है? मेरे पूज्यपाद गुरुदेव नित्यप्रति व्याख्या किया करते है। आर्य उसी को नहीं कहते जो आज के संसार ने अपना लिया है। कि जो ऋषि दयानन्द को मानता है। जो ऋषियों के वाक्यों पर चलता

है परन्तु वही आर्य है आज के मनुष्य को जब मैं दृष्टिपात् करता हूँ तो वह कहता है कि मैं तो बड़ा कट्टर आर्य समाजी हूँ, परन्तु आज कट्टर पने से कुछ नहीं बनेगा। परन्तु अगर कुछ बनेगा तो उस समय बनेगा, जब तुम अपनी कट्टरता को त्याग दोगे।

कट्टरता से कोई मानव ऊँचा नहीं बनता। आज मानव तब ऊँचा बनता है, जब अपने कट्टरपने को त्यागता है, शुद्धता को अपनी वेदी पर लाता है, ऋषियों के नियमों को अपने अन्तःकरण में धारण करता है, वही मानव आर्य बनता है। अन्यथा यहाँ आर्य नहीं बनोगे।

महान महर्षि दयानन्द ने वेदों को अपनाया और कहा कि हमें परमात्मा का पुजारी बन जाना चाहिए। परन्तु इस स्वार्थी संसार ने उनके विचारों पर आक्रमण किया, उनके व्यक्तित्व पर आक्रमण करके उसे सदा के लिए पृथ्वी पर विश्राम करा दिया। इस संसार ने क्या नहीं किया। आज जिस वेदी पर हमारे वाक्य जा रहे हैं, वह महान पवित्र वेदी है, जिसे महान ऋषि आत्मा ने सींचा है। उस वेदी को स्थिर रखने के लिए सत्यता को अपनाना होगा। यदि तुम सत्यता को नहीं अपनाते तो ऋषि के विचारों पर आक्रमण करते चले जा रहे हो। मूलशंकर ने, महर्षि दयानन्द ने इस पवित्र वेदी को अपनाया कि जिससे यह संसार ऊँचा बन जाए परन्तु आज उनके जो अनुयायी हैं उनमें क्या है? एक रूढ़िवाद इस प्रकार का छाया हुआ है कि उनके समक्ष भगवान राम और भगवान कृष्ण का नाम उच्चारण कर दें तो कहेंगें अरे अरे तुमने यह क्या उच्चारण कर दिया? यहाँ इस प्रकार विचारों को नष्ट नहीं करना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति अपने विचारों में स्वतन्त्र है, कर्म करने में स्वतन्त्र है, आज तुम उनके विचारों को न कुचलो। यदि तुम्हें आज विचारों को ही कुचलना है तो अपने कुविचारों को कुचलो, जिससे तुम्हारा जीवन पवित्र बन जाएगा। जिससे ऋषियों की वेदी को विचारने लगोगे।

आज मैं यह अवश्य कहने आया हूँ कि जहाँ तक सनातन और आर्यता की भिन्न भेदता मानी जाती है वह सूक्ष्म है। भिन्नता केवल विचारों की है। विचारों पर आक्रमण करने से यह वाक्य हमारे आँगन में नहीं आता। दोनों अपनी रूढ़िवादिता को नहीं त्यागना चाहते। केवल विचारों का रूढ़िवाद है। एक कहता है कि हम आर्य समाजी हैं। और एक गौरव

से कहता है कि हम सनातनी हैं। परन्तु वह न तो एक प्रकार से आर्य है और न ही वह सनातनी हैं। जो हृदय में गौरव के साथ कहा करते हैं क्योंकि यदि दोनों में परम्परा की भावनाएं हैं तो वे आर्य भी हैं और सनातन भी हैं। अब केवल मनमानी वार्ताएं प्रारम्भ हो जाती हैं, मनमानी यज्ञ की परिपाटी प्रारम्भ हो जाती है, ऋषित्व के सब वाक्य समाप्त हो जाते हैं तो यहाँ न आर्य ही रहा, न सनातन ही रहा। मैं यह नहीं कहता कि बिल्कुल नहीं है। हैं इनमें सत्यवादी और विचारशील हैं और उनके विचारों पर आक्रमण किया जाता है।

हम संसार के इतिहास को देखा करते हैं तो प्रतीत होता है कि विज्ञान की अनुपम विद्या इस भारत भूमि में पनपी थी, यह वह पवित्र भूमि है जहाँ भगवान कृष्ण पनपे, जहाँ भगवान राम पनपे, जहाँ ऋषि मुनि पनपे। आज इस पर पनपना है तो तुम्हें आर्यता और सनातनता दोनों को विचारशील बनना होगा और कैसे बनना है? सनातन को तो अपनी महान त्रुटियों को त्यागना है। जो वे जड़ पूजा में संलग्न होते जा रहे हैं और जड़ पूजा पर इतना अटूट विश्वास है कि यदि कोई उसके विपरीत कहता है। तो वह उसे नष्ट करने के लिए उद्यत हो जाते हैं, इसे त्यागना चाहिए। आर्यों को अपने हृदय में श्रद्धा की वेदी को जागृत कर देना है। यदि दोनों में श्रद्धा और त्रुटियों का त्यागना हो जाएगा तो वेद की वेदी पवित्र बन सकती है। अरे श्रद्धालु हो करके जड़पूजक बन गये। तो यहाँ वेद का पग न रहेगा। यदि इस संसार और वेद की वेदी को ऊँचा बनाना है, ऋषित्व को ऊँचा बनाना है, तो निश्चित ही तुम्हें श्रद्धा की वेदी को अपनाना पड़ेगा।

आज ऋषि दयानन्द का कोई प्रमाण नहीं, कि वह कितने श्रद्धालु थे। उनके जीवन में श्रद्धा की कितनी ज्योति जागृत थी। वे वेद के इतने श्रद्धालु थे, इतने अनुयायी थे, कि समस्त जीवन भर ब्रह्मचारी रह करके, उस ओ३म् की पताका को अपनाया, जिस ओ३म् की पताका से आज वेद का गौरव हमारे समक्ष है। आज वेद का विज्ञान हमारे समक्ष है। आज हम गौरव के साथ उच्चारण कर सकते हैं कि वास्तव में हमारे द्वारा एक साकल्य है तो केवल वह एक वेद है। कोई न कोई ऋषि आत्मा इस संसार में प्रकट

होती है जिस ऋषि आत्मा के आधार से यह संसार ऊँचा बनता है और वैदिक साहित्य का प्रकाश होता है। जिससे श्रद्धा की देवी जागृत हो जाती है और यह संसार ऊँचा बन जाता है।

आज मैं यह उच्चारण करने आया हूँ कि विचारों पर आक्रमण ने होने दो। जब विचारों पर आक्रमण होगा, तो उसी काल में जीवन की वेला समाप्त हो जाएगी। आज सबसे प्रथम हमने स्वयं ही अपने विचारों पर आक्रमण करना प्रारम्भ कर दिया। मेरी प्यारी माता के विचारों को नष्ट करने लगे। माताएं अपने पतियों के वाक्यों को शान्त करने लगीं। राजा अपनी प्रजा की भावनाओं पर आक्रमण करने वाला बन गया और प्रजा राजा के वाक्यों पर आक्रमण करने लगी, तो क्या हुआ? यवनों ने यहाँ आक्रमण किया। न राजा ही रहे न प्रजा ही रही। दोनों पराधीन बनकर यहाँ वेद पर आक्रमण किया गया। वेद का साहित्य लुप्त होता चला गया।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मेरे विचारों पर आक्रमण किया करते हैं कि तुम कटु कहा करते हो। परन्तु मैं क्या करूं? मुखारबिन्द से कटु शब्द उच्चारण होते हैं क्योंकि हमने वेद की पवित्र वेदी को सींचा है और यदि इस वेदी में कोई सूक्ष्मता होती है, नास्तिकवाद होता है तो विचारों पर अवश्य प्रभाव आता है और उसके विषय में कटु उच्चारण करना स्वाभाविक हो जाता है। जैसे मेरी भोली माता अपने पुत्र को बनाती है। गर्भस्थल में, दुःख सुख में हर प्रकार से पालना करती है। गर्भस्थल से जब पृथक् हो जाता है तो उस समय भी उसे बनाने की इच्छा रहती है। प्रबल होने के पश्चात् माता का पुत्र यदि नाशवान मार्ग पर चलता है तो माता के हृदय से जानो कि उसे कितना दुःख होता है। उस समय वह अपने पुत्र के विचारों पर आक्रमण करती है और वह कटुता को लेकर कहा करती है कि पुत्र यदि तू मेरे गर्भ से जन्म न लेता तो मेरा जीवन सुखी रहता। इसी प्रकार मेरे वाक्य भी कटु रहते हैं क्योंकि हमने उस वेदी को सींचा है जिस वेदी पर आक्रमण होता चला जा रहा है। श्रद्धा की वेदी को इस प्रकार कुचला जा रहा है जिसका कोई प्रमाण नहीं। इसलिए यहाँ कटुता होती है। आज ऋषि दयानन्द की आत्मा जहाँ भी है और यदि वह इस संसार को देखती है तो उसे भी दुःख होता है कि

जिस वेदी को तूने सींचा था आज उस वेदी के अनुयायी क्या करते चले जा रहे हैं। जब सूक्ष्म सूक्ष्म पदों पर तुम्हारा विवाद है, तो तुम्हारी आर्यता क्या है? क्या तुम्हारे विचार ऊँचे बन सकते हैं? क्या संसार में तुम दूसरों को ऊँचा बना सकते हो?

आज यह संसार ऐसा बन चुका है कि जहाँ विचारों को नष्ट किया जाता है। कभी यह संसार ऐसा था जब यहाँ विचारों पर आक्रमण नहीं होता था परन्तु विचारों का सत्कार किया जाता था, उन्हें ग्रहण किया जाता था और उन विचारों को ग्रहण करके यह भारत स्वर्ग कहलाता था। भारत ही नहीं संसार स्वर्ग कहलाता था। आज यहाँ प्रत्येक मानव दूसरे राष्ट्र की प्रशंसा करता है परन्तु उसके निकट जाकर के उसे पता चलता है कि वहाँ कितनी त्रुटियाँ हैं। आज भी हमारी इस भारत भूमि में ऐसे ऐसे लाल प्राप्त हो जाएंगे, जिनकी संसार में कोई उपमा नहीं दे सकता। दूसरे राष्ट्रों में जहाँ भी जाओगे, वहाँ लाल नहीं मिलेंगे, वहाँ ऐसे स्वार्थी प्राणी ही मिलेंगे और वह चाहेंगे कि किसी को पान करके अपने हृदय में रमण कर जाओ। जिसे तुम उन्नति कहते हो, वहाँ यह उन्नति है। परन्तु इस भारत भूमि में यदि पर्वतों की कन्दराओं में खोजोंगे तो तुम्हें वे ऋषि व लाल मिल जाएंगे जो, अन्तरात्मा में सर्व संसार का भ्रमण करते हैं यहाँ ऋषि दयानन्द, स्वामी शंकराचार्य, महात्मा बुद्ध जैसे लाल थे। जिन्होंने संसार को चकित किया। क्या नहीं हुआ, इस भारत भूमि पर? जब ऋषि दयानन्द की, ओ३म् की पताका लहराती थी, जब वह वेद की वेदी को सींचने के लिए चले तो उस समय राजा महाराजाओं ने आश्चर्य किया, कि अरे! यह साधु इसी प्रकार कार्य करता रहा तो हमें अपना स्थान यहाँ से त्यागना ही पड़ेगा। यह वेद की पवित्र और सत्य वेदी है, जिसे लेकर जो व्यक्ति चलता है वह इस संसार में ऊँचा बन सकता है। उसका जीवन सर्वोपरि कहलाता है।

मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा करता हूँ कि हे गुरुदेव! आप इस शरीर को क्यों नहीं त्याग रहे हो? आपके विचारों को इस प्रकार नष्ट किया जा रहा है। क्यों नहीं, इस शरीर को त्याग करके उस महान पूर्ण शरीर में आ जाते? परन्तु क्या करें, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव एक ही वाक्य कहा करते हैं कि कर्म फल भोगना तो आवश्यक है। जब कर्म फल की चर्चा आती है तो हम शान्त रह जाते हैं। परन्तु मैं एक वाक्य उच्चारण

करने आया हूँ कि हे भद्र मण्डल! आज तुम्हें ऊँचा बनना है तो अपने विचारों को नष्ट न करो। जो कार्य करो शुद्ध और पवित्रता से करो, अन्तर भावनाओं से करो। अरे, परमात्मा तुम्हारे कर्मकाण्ड को नहीं देखता, वह संसार में तुम्हारी अन्तःकरण की भावनाओं को देखता है। आज परमात्मा तुम्हें नहीं देखता कि तुम आर्य हो या सनातन हो, यवन हो या ईसा हो, मुसा हो, देव हो या कोई ओर हो। परन्तु परमात्मा तुम्हारे उन भावों को देखता है जो तुम्हारे अन्तःकरण में होते हैं।

एक समय किसी ने ऋषि से प्रश्न किया कि परमात्मा क्या आहार करता है? तो उत्तर दिया कि परमात्मा मानव के अन्तःकरण की भावनाओं को आहार करता है और उसी के अनुकूल फल देता है, जैसे कृषक गौ के बछड़े की अच्छी प्रकार उच्च भावनाओं में लालन पालन करता है। तो बछड़ा प्रबल होने के पश्चात् उस कृषक की कृषि को बीज योग्य बनाता है और जब वह वाहन में गति करता है तो कृषक बड़ा प्रसन्न होता है। उस कृषक की भावनाएं उस गौ के बछड़े में ओत प्रोत होकर के वह उसी प्रकार का कार्य करता है। इसी प्रकार जो भी हम कार्य करते हैं, वह जो हमारे अन्तःकरण की भावना है परमात्मा उन्हें अपने में धारण करता है।

आज यहाँ कर्म काण्ड भी होना चाहिए। मैं यह नहीं कहता कि कर्म काण्ड नहीं होना चाहिए। परन्तु जो भी हो, वह हृदय से हो, पवित्रता से हो, पवित्र विचारों से हो। उस समय तुम्हारा जीवन सर्वोत्तम बनता चला जाएगा। आज मैं विचारों की चर्चा करने आया था कि यहाँ विचारों पर कितने आक्रमण हुए। यहाँ पुस्तकालय के पुस्तकालय समाप्त कर दिए। मैंने आज से तीन हजार वर्ष पूर्व, वह दृश्य देखा है जब यहाँ महाराजा पाण्डव के साहित्य को अग्नि के मुखारबिन्द में अर्पित कर दिया था। मैंने उस समय को देखा था जब यहाँ लाक्षागृह अग्नि में नष्ट हो गया था। यहाँ महाभारत के युद्ध के पश्चात् एक विशाल विद्यालय रहा था। यहाँ वह साहित्य था जिसमें महाराजा घटोत्कच्छ, महाराजा अर्जुन, भीम, नकुल और सहदेव का जो भी साहित्य था, जो भी विज्ञान था, जिनमें अन्तरिक्ष में जाने के यन्त्रों के आविष्कार का विधान था, नाना धातु इत्यादियों को जानने का साहित्य था, वह सब अग्नि के मुख में चला गया। जब भारत

भूमि के विनाश का समय आया, तो ऐसा किया गया। यदि इसका अभाग्य न होता तो इसको आज ऐसा भोगना न पड़ता। इस पर आक्रमण ही क्यों होता?

महर्षि व्यास ने केवल एक वाक्य कहा था कि संसार में रूढ़िवादी मत बनो। यदि तुमने रूढ़िवाद को अपना लिया, तो निश्चित ही ऋषि के वाक्यों पर आक्रमण करते चले जा रहे हो। रूढ़िवादियों से जाकर नम्रतापूर्वक कहो कि रूढ़िवादी मत बनो। आज यहाँ वेद का साहित्य तुम्हारे द्वारा होना चाहिए, हो जाएगा। आगे वह समय अवश्य आएगा। मुझे प्रभु पर और अपने पूज्य गुरुदेव पर विश्वास है।

मुझे तो ऐसा अनुभव हो रहा है कि आगे कुछ काल में वह समय आएगा कि वेद का साहित्य पुनः से पनप जाएगा। अवश्य पनपेगा। इसका क्या कारण है? इसका कारण यह है कि ऋषि मुनियों की भावनाएं और ऋषि आत्माएं यहाँ आने लगेगी तो वास्तव में यह वेद का साहित्य पनप जाएगा। संसार में, इसका प्रसार होता चला जाएगा। जैसे आज भौतिक विज्ञान का संसार में प्रसार है ऐसे ही आध्यात्मिक विज्ञान का भी प्रसार अवश्य होगा। हे प्रभु! वह काल शीघ्र दीजिए जब माता गार्गी जैसी मेरी प्यारी माता इस संसार में वेद के साहित्य को लेकर के संसार में रमण करती चली जाएगी। पीछे संसार होगा, और आगे वेद की पताका और माता गार्गी होगी। प्रभु वह काल किस काल में आएगा, जिस काल में ओ३म् की पताका होगी और वेद का साहित्य संसार में पुनः की भाँति होगा।

आज मुझे अधिक वाक्य उच्चारण नहीं करने। विचार केवल यह कि इस संसार को और वैदिक साहित्य को और ऊँचा बनाना है, तो यहाँ विचारों पर आक्रमण न होने दो। रूढ़िवादी मत बनो। श्रद्धा की वेदी को जागृत करो। जो ऋषि दयानन्द की श्रद्धा थी। ऋषि दयानन्द कितने श्रद्धालु थे अपनी जन्मभूमि के लिए, वेद की विद्या के लिए और परमात्मा के कितने श्रद्धालु थे, कि जिस समय शरीर को त्यागा, उस समय भी प्रभु से यह कहा कि प्रभु! तेरी इच्छा है। उस महान आत्मा की क्या अनुपमता है? शंकराचार्य जब इस संसार से जाने लगे, तो शंकराचार्य ने यह कहा कि प्रभु! तेरी इच्छा है। अरे! ये महान आत्माएं कितनी पवित्र हो सकती हैं जो मृत्यु को भी प्रभु की इच्छा पर त्यागते

चले गए। अपने विचारों को प्रभु पर अर्पित करते चले गए। अरे! जिनके इतने विशाल, महान कैलाश पर्वत के तुल्य विचार थे, उनके विचारों को, तुम कीचड़ के तुल्य न बनाओ। उनके विचारों को तुम संसार में उस ऊँचे शिखर पर पहुँचा दो कि उनकी जो भावनाएं थीं, उनका जो गौरव था आगे आने वाली सन्तति पर पड़े। यदि आने वाली सन्ततियां रूढ़िवादी बन गई, एक दूसरे के विचारों पर आक्रमण करने वाली बन गई, तो जानो, उन ऋषियों के वाक्यों को कुचला जा रहा है। आज अपने इस पक्षपात को त्याग दो। मेरा यह वाक्य कटु तो प्रतीत दे रहा होगा। परन्तु जो यह कहते हैं कि हम ऋषि दयानन्द के शिष्य हैं, वेद के अनुयायी हैं। अरे, वेद के अनुयायी हो, ऋषि के भी शिष्य हो परन्तु तुम अपने मन के भी तो सेवक हो, अपने स्वार्थ के तो सेवक हो। वह जो तुम्हारा मन है, वह जो तुम्हारे हृदय में कुवासनाएं हैं उनके तुम सेवक बने हुए हो। जिस समय तुम उनका सेवक बनना त्याग दोगे, तो निश्चय है कि तुम ऋषि के शिष्य भी बन जाओगे, वेद के अनुयायी भी बन जाओगे। वेद का अनुयायी और ऋषि का शिष्य बनना कोई सहज नहीं है।

आज शिष्य या सेवक वही बन सकता है जो किसी के विचारों को धारण करता है, सत्यता को धारण करता है और विचारों को कुचलता नहीं अपितु स्वागत करता है।

यदि आज का संसार वैज्ञानिक बनना चाहता है, वेद के साहित्य का अनुयायी बनना चाहता है तो विचारों पर आक्रमण न होने दो। आज सनातन सनातन पुकारता चला जा रहा है। मैं जानता हूँ मैंने भी अच्छी प्रकार हृदय में देखा है कि हृदय में नाना प्रकार की ग्लानि हैं। राम राम पुकारता है और हृदय में ऋषि वाक्य को नष्ट करता चला आ रहा है। यह क्या है? यह रूढ़िवाद है। इसी को हमारे यहाँ गुरुडमवाद कहते हैं। इस गुरुडमवाद को शान्त करने के लिए आज तुम्हें आगे चलना है और ऋषियों के वाक्यों का समर्थन करके आज उस साहित्य को पुनः से लाना है जिससे संसार का कल्याण हो जाए, राष्ट्र का कल्याण हो जाए।15 07 1964

जिस समय भारत भूमि में भरत के पुत्र, सिंह के पुत्रों से किलोल करते थे, अरे, बालक सिंहनी से विनोद करते थे। माता भी तो अहिंसा परमोधर्मी थी हे माता! तू वह माता न

बन, जिससे विष उगलने वाला बालक उत्पन्न हो। हे माता! आज तू अमृत उगलने वाले बालक को जन्म दे। तू ऋषि दयानन्द को क्यों नहीं जन्म देती? तू आचार्य शंकर को क्यों नहीं जन्म देती? भगवान राम को क्यों नहीं जन्म देती? भगवान कृष्णा को क्यों नही जन्म देती? माता! तेरी वह उज्वलता कहाँ चली गई?

ऋषि दयानन्द वास्तविक आर्य थे, शंकराचार्य वास्तव में आर्य थे, परन्तु उनके अनुयायी और भी वास्तविक आर्य थे। ऋषि दयानन्द के अनुयायी आज भी कुछ आर्य है, कुछ वास्तविक आर्य है। परन्तु अधिकतर ऐसे जिनको मैं तो आर्य नहीं उच्चारण कर सकता। मैं उच्चारण क्यों करूं? आर्य हैं ही नहीं तो उच्चारण क्यों करुं? परन्तु जहाँ वेद की चर्चा होती हो, कहीं राष्ट्र विवेचन हो रही हो परन्तु उनके प्रतिकूल न हो, अनुकूल होनी चाहिए उनके विचारों के अनुकूल हो, वह यौगिकता से भरा हुआ होना चाहिए, परन्तु उनके अनुकूल हो तो वह बड़ा सुन्दर है। परन्तु यहाँ भी सोचे विचारों केवल बुद्धि ही नहीं कहती, यहाँ तो ऐसा सूक्ष्म रहस्य है जो बुद्धि से परे वाला, जो वाक् विचारने वाला हो, यर्थाथता में देखना चाहते हो, तो ऋषि दयानन्द के जीवन को दृष्टिपात करो महात्मा शंकराचार्य के जीवन को दृष्टिपात करो महर्षि पतंजलि के जीवन को दृष्टिपात करो। तो तुम वास्तव में आर्य बनते चले जाओगे, यहाँ आर्य ही आते है और जब यहाँ आर्य आते है जब ही यह संसार श्रेष्ठ होता है। 21 06 1969

आज जब मैं स्वामी दयानन्द के विचारधारा वाले व्यक्तियों में जाता हूँ तो वह यह चाहते हैं कि वास्तव में यह हमारा सुन्दर मत है। इसी प्रकार जब मैं परम्परा वाले व्यक्तियों में जाता हूँ तो वहां यह प्रतीत होता है कि वह बड़ा महान पापी और पामर था, इसी प्रकार नानक के मानने वालों में जाता हूँ वह दूसरों को पामर कहते हैं। मोहम्मद के मानने वालों में जाता हूँ तो वहाँ भी दूसरों को पामर कहा करते हैं। परन्तु जब ईसा के विचारों में जाते हैं तो वह भी दूसरों को पामर कहते हैं कि अरे, भोले प्राणियों! तुम वहाँ कहाँ जा रहे हो? जहाँ तुम्हें घृणा की दृष्टि से दृष्टिपात किया जाता है, एक दूसरे मानव को, जब धर्म के ऊपर नाना प्रकार की घृणा उसके हृदय में आती रहती है तो इसका क्या उपाय है? इसके ऊपर मानव को सुन्दर टिप्पणी देनी चाहिए, कि जिस

टिप्पणी के आधार पर, धर्म और मानवता की रक्षा हो सके। अन्यथा संसार जिस वेदी पर चला जा रहा है वहाँ धर्म और मानवता के ऊपर ही नाना प्रकार का आक्रमण हो रहा है, यहाँ धर्म को नष्ट नही किया जाता है, केवल रूढ़िवाद के ऊपर विचार विनिमय करना चाहिए। महापुरूषों के, सभी के विचारों को, तुम सुन लो और सभी के विचारों को सुन करके एक सुन्दर विचार बना लेना चाहिए।

परन्तु आज का जो राष्ट्रवाद है उसका सिद्धान्त यह है कि एक दूसरे मानव की एक दूसरे मानव से घृणा करा देना, धर्मों में घृणा करा देना, और अपने नेतृत्व की पूर्ति करना यह राष्ट्र का एक नियम बन चुका है। परन्तु जब यह नियम बन गया है और आज से नही, बहुत समय से यह नियम बन गया, और यह नियम इसीलिए है कि हमारी जो पद लोलुपता है, हमारा जो स्वार्थवाद हैं उसमें किसी प्रकार का विलम्ब न आ जाएं। यह संसार कहीं चला जाए, धर्म कहीं जाए पोथी कही जाए ऋषि दयानन्द कहीं चले जाए, महात्मा नानक कही चले जाए, और अन्त में कोई कहीं चला जाए परन्तु हमारा जो आनन्द है, उसमें किसी प्रकार का दोषारोपण न आ जाए हमें तो केवल अपने दोषों के ऊपर विचार विनिमय करना है और विचार यह करना है कि बिना धर्म के, आज जो मानव राष्ट्रवाद को बनाना चाहता है तो वह राष्ट्रवाद कितने दिनों तक चलेगा? कितने समय तक रह सकेगा वह? कुछ ही समय के पश्चात उसकी परम्पराएं नष्ट हो जाया करती हैं।

परन्तु आज मानव में भी नाना प्रकार के दोषारोपण आ गए हैं। जब मैं यह विचार विनिमय करता हूँ कि महान आत्माएं जो इस पृथ्वी मण्डल पर आयी सुधारों की चर्चाएं प्रगट की, सुधारक बने, उनका अन्तरात्मा अन्तरिक्ष में भ्रमण करता है और वह आत्मा बड़ी व्याकुल होती रहती है कि ये मेरे मानने वाले कहाँ जा रहे हैं? मैंने कौन सा ऊत्तर दिया था इनको? मैंने तो यह कहा था कि तुम गऊ की रक्षा करो मैंने यह नही कहा था कि तुम गऊ का भक्षण करने लगो। मैंने तो यह कहा था कि वेद की पोथी को विचारो, सत्य को सत्य स्वीकार कर लो। मैंने यह नही कहा था कि राष्ट्रीय विचारों में जा करके अपनेपन को, अपनी पवित्रता को नष्ट करते चलो, वह आत्मा तो इनकी

व्याकुलता में परिणत रहती है, इसके ऊपर तो विचार विनिमय ही करना होगा और अनुसन्धान करना होगा, परन्तु अनुसन्धान की दृष्टि से जब इसको विचारोगे, तो तुम्हें यह प्रतीत होगा कि वास्तव में तुम्हें कहा जाना हैं। एक मानव दूसरों को कटु शब्द उच्चारण करने में बड़ा सहज रहता है परन्तु अपनेपन को ऊँचा बनाने में असमर्थ रहता है। आज वह क्यों असमर्थ है? क्योंकि वह दूसरों की त्रुटियों पर विचार विनिमय करता है, अपनी त्रुटियों पर विचार नही करता, उसमें इस प्रकार के दोषारोपण हो जाते हैं, इसी प्रकार हमें वास्तव में विचार विनिमय करना है।

मैं सन्यास के मार्ग पर जाता हूँ तो और ही कुछ प्रतीत होता है। जब मैं सन्यास आश्रम में जाता हूँ अहम् ब्रह्मास्मि का सुन्दर उपदेश रहता है। अहम् ब्रह्मास्मि् कहने वालों को, जिस काल में भी कोई मानव उनको छू लेता है तो अपवित्रता का कारण आ जाता है। यह क्या है? विचारा नही जाता, परन्तु इससे प्रतीत होता है। कि धर्म और परमपिता परमात्मा को इस संसार ने अच्छी प्रकार जाना नही। और न जानने के कारण वह एक दूसरे से घृणा करता है। वास्तव में, तो वह मानव कहता है कि मैं धर्म और वेद को जानता हूँ परन्तु उसके प्रति वह घृणा के क्षेत्र में विराजमान है। तो यह जानो कि वह वेद के अंगों का जानता नही और वह मानव उनसे बहुत दूरी रहता है। उसकी विचारधारा ही बहुत दूरी है, आगे रहा यह वाक् कि अब यदि हम यह विचार विनिमय करने लगें कि इस राष्ट्र में आज जो परम्परा चल रही है यह बहुत सुन्दर परम्परा चलने वाली थी, परन्तु क्या हुआ इस परम्परा में? जिनको धर्म को ले करके आगे चलना था वह धर्म को त्यागते चले गये और जब उस परम्परा में धर्म को त्यागा गया, तो अपनाने में असमर्थ हो गये, असमर्थ क्यों हो गये? क्योंकि पद की लोलुपता में और अपने विचारों को स्वतन्त्र बनाने में। क्योंकि मानव की वाणी स्वतन्त्र हो गई। परन्तु आन्तरिक विचार स्वतन्त्र नही बनें।

जब मानव के विचार स्वतन्त्र बनेंगें। तो उस काल में यह संसार और मानव समाज ऊँचा बनेगा राष्ट्रवाद ऊँचा बनेगा। परन्तु आन्तरिक जो भावना है वह पराधीन है, किसके आधीन है? पद के आधीन है अन्तरात्मा की वाणी जो है, उसको अपनाने में पराधीन

माने जाते है। इसी प्रकार हम यह विचारते हैं कि महान पुरूष कैसे थे? एक समय यहाँ ऐसा माना गया है कि महाभारत काल के पश्चात एक समय महात्मा नानक से किसी यवन ने कहा कि आप हमारे सम्प्रदाय में आ जाओ, तो बड़ा सुन्दर होगा।
उन्होंने कहा कि मैं क्यों आ जाऊं? तुम्ही यहाँ आ जाओ। क्योंकि तुममें हममें किसी प्रकार का अन्तर्द्वन्द्व नही है। केवल विचारों का है। विचारों का परिवर्तन कर लो। और मैं यवन क्यों बन जाऊं? क्योंकि यवन बनने से मुझे क्या लाभ होगा? यहाँ तो सभी संसार में मानव है, हमें मानव बनना है और मानवता की पवित्र वेदी पर चलना है, गौ की रक्षा करनी है। यह सब महापुरूष ने कहा।
एक समय ऋषि दयानन्द से एक शब्द कहा था। कि तुम, मठाधीश बन जाओ। और खण्डन न करों, मण्डन ही मण्डन करों। उन्होंने कहा कि मैं मठाधीश क्यों बन जाऊं? और खण्डन करना मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है। अशुद्धियों का खण्डन मैं सभ्यता के आँगन में करूंगा, मधु मेरे द्वारा होगा, और अभिमान की मात्रा नही होगी। परन्तु मेरे द्वारा वेद साक्षी होगा, जब वेद साक्षी होगा, तो मैं परमात्मा के राष्ट्र में हूँ। उस राजा के राष्ट्र से मैं कदापि दूरी हो भी नही सकता। ये महापुरूषों के शब्द हैं, महापुरूषों के शब्दों पर जाना ही मानव का कर्तव्य है। शब्द तो उच्चारण करना यथार्थ है। परन्तु उसमें अभिमान है। वह दूसरे आसन के लिए कहता है कि मैंने यह घोषणा की है उस घोषणा पर अभिमान आ गया, जहाँ अभिमान है, वहीं मृत्यु हैं इन शब्दों का अच्छी प्रकार प्रतिपादन न हो करके, मानव अभिमानी बन करके, अपनेपन से दूरी चला जाता है। इसीलिए ये कुछ अशुद्धियां भी हैं परन्तु इन अशुद्धियों को समाप्त किया जाएं। महापुरूषों का कर्तव्य है कि आज कैसे ये अशुद्धियां समाप्त हों? सब बुद्धिमान शान्त वातावरण में विराजमान हो करके धर्म के ऊपर अपने विचार प्रगट करें और धर्म के ऊपर विचार प्रगट करके, एक मत हो करके एक विचार बना करके एक प्रतिभा को अपना करके संसार में ऊँचे से ऊँचा विधान बना करके, अपने मानवत्व की सुरक्षा करनी चाहिए। 25 08 1969
राष्ट्र में रूढ़ि होने का परिणाम यह हुआ कि संसार का वैज्ञानिक समाप्त हो गया। संसार

का मननशील मानव समाप्त हो गया, इसी प्रकार हमें विचार विनिमय करना है और सुन्दर विचारकों के समीप जा करके हमें विचारों को व्यक्त करना है। आज ऋषि दयानन्द के विचारों को अपनाना है। 31.08.1969

मुझे स्मरण आता रहा हैं कि कुछ काल पूर्व यहाँ ऋषि दयानन्द महान हुए हैं। परन्तु उनकी बहुत सी निष्ठा वेदों पर रहीं। उनके मानने वालों ने केवल एक स्थान को चुन लिया कि वाक् बहुत उच्चारण कर दो, परन्तु तुम्हें करना कुछ नही, ऐसा वाक् जब आ जाता है ऐसी वृति मानव की जब हो जाती है तो महापुरूषों की जो वार्ता होती हैं उसका भी विनाश अवश्य हो जाता हैं।

इसी प्रकार महात्मा शंकराचार्य थे उनकी वेदों के ऊपर और दर्शनों के ऊपर बहुत निष्ठा थी परन्तु उन्होंनें जो चार क्षेत्र बनाये अपने राष्ट्र में, चार क्षेत्र बनाये वहां मठाधीश बन गये और शंकराचार्य की प्रवृत्ति समाप्त हो गई। इस प्रकार की जो धारणा होती है वह धारणा समाज को और प्राणी मात्र को नष्ट कर देती हैं राष्ट्रवाद की जहाँ चर्चा होती हैं राष्ट्रवाद क्या है? विचारने वाला वाक् यह है कि आज का संसार राष्ट्रवाद के लिए पुकार रहा है, राष्ट्र के लिए बहुत से गुप्त कार्य होते हैं, राष्ट्र की बहुत सी गुप्त वार्ता होती हैं, राजा को, स्वयं इतना चरित्रवादी बनना चाहिए कि प्रजा में उसके शब्दों की ऐसी ध्वनि हो, जिससे प्रजा में विश्वास हो जाएं। प्रजा भी इसी प्रकार का अनुसरण करने लगे, तो यह जो दोनों द्रव्य के लालच में होते है ऐसी दशा समाज की उस काल में बन जाती हैं। क्योंकि राजा चरित्रवान नही रहता, महान नही होता, उस काल में ऐसी दशा बन जाती हैं। इसीलिए मैं प्रभु से यह आकांक्षा करता रहता हूँ, कि यहाँ राजा महान होने चाहिए, और उसको चुनने वाले ब्राह्मण हों, जिस राजा को साधारण प्राणी चुनेंगें, जिस राजा को मूर्ख समाज चुनेंगें जिसको अक्षर नही आता, ऐसे प्राणी चुनेंगें तो उस प्रजा का चुना हुआ राजा भी मूर्ख ही होता है। 69.77.012

यहाँ आचार्य शंकर के पुजारी, यहाँ नाना महापुरूषों के पुजारी एकत्रित होते हैं और वे अपनी चर्चा प्रगट करते हैं। परन्तु उनकी सामूहिक चर्चा नही होती, मैं यह कहा करता हूँ कि सामूहिक चर्चा से वह निकलेगा जो महापुरूषों की मूल धारा है, उन्हें एकत्रित

करो ऋषि दयानन्द क्या मूल आदेश क्या था? आदेशों को विचार लेना चाहिए।

आज संसार का क्या बनेगा, संसार अग्नि के मुख में चला जाएंगा, उसके पश्चात राष्ट्रवादियों का चुनाव ऊँचे ऊँचे प्रकार का हो सकता हैं जहाँ मैं इन वाक्यों को ले करके चलूं कि ऐसा क्यों होगा? क्योंकि जन समाज प्रबलता को प्राप्त होता चला जा रहा हैं आज के राष्ट्रवाद के विषय में कैसा विधान बनाया? मानव जीवन बड़े दुर्लभ और जहाँ पुण्य कर्मों से प्राप्त होता हैं, माताओं के ऊपर आक्रमण हो यह क्या है? यह विनाश के विचार नही तो और क्या हैं, इनमें मौलिकता क्या है इनमें व्यापकता प्रतीत नही होती हैं। अरे, जो सृष्टि को बनाता है, सृष्टि को जो रचाता हैं अरे, उसी के ऊपर उसका अधिकार होता हैं, न कि एक प्राणी के ऊपर, होता। जब माता यही नही जानती कि तेरे गर्भ में, तेरे पुत्र की रचना कैसे हुई है, तेरे पुत्र की रचना किसने की हैं? कैसे हुई है? उस माता को मृत्यु दण्ड देने का अधिकार नही होता। इसी प्रकार जिस वस्तु को राजा बना नही सकता, उस को मृत्यु दण्ड भी नही दे सकता। आज वास्तव में दोषों से, मृत्यु दण्ड दिया जा सकता हैं परन्तु अकारण उसको दण्ड नही दिया जा सकता, राष्ट्र की व्यवस्था को विचारशील बनाने के लिए दण्ड दिया जा सकता हैं परन्तु अकारण उसको दण्ड देने का अधिकार नही होता।

आज का राष्ट्रवाद मांसों का भक्षण करने वाला, राष्ट्र बनता चला जा रहा हैं जहाँ एक जीव को भक्षण करने में ही मानव आनन्द अनुभव करता हैं तो इसका विनाश नही होगा। तो फिर क्या होगा? आज जब हम इन वाक्यों पर जाते हैं तो हमें ऐसा प्रतीत होता हैं कि हम कहाँ जाएंगें, जहाँ मैं महर्षि दयानन्द के पुजारियों के समीप जाता हूँ तो वहाँ मुझे अग्नि ही अग्नि प्रतीत होती है। वहाँ भी मुझे स्वार्थवाद ही प्रतीत हो रहा हैं, जहाँ भगवान राम और भगवान कृष्ण के पुजारियों के द्वारा जाता हूँ तो उनके द्वारा नाना प्राणियों का आहार किया जा रहा हैं और ऊपर से राम राम की धुन है। विनाश तो होना ही हैं संसार का, क्योंकि वे विनाश के मार्ग पर विराजमान हैं, संसार अग्नि की वेदी पर विराजमान हैं जहाँ यज्ञों को पाखण्ड कहा जाता हो और जहाँ चरित्र को नष्ट करने के लिए मनोरंजन कहा जाता हो, अरे, इस संसार का विनाश नही होगा तो क्या

बनेगा? जहाँ धर्म को पाखण्ड और अधर्म को मनोरंजन के रूपों में कहा जाता हो तो इसका विनाश अवश्य ही होना हैं।69.77.024
यज्ञ कर्म करो, शुद्ध पवित्र कर्म करोगे तो संसार में जीवन ही जीवन बनेगा और उससे जीवन की पद्धति बनती चली जाएंगी इसीलिए अपने जीवन को जितेन्द्रिय बनाने में सदैव तत्पर रहना चाहिए। अरे, राष्ट्र का तो जो बनेगा वह बनता रहेगा परन्तु प्रत्येक मानव प्रत्येक मेरी पवित्र माताओं को ऊँचे से ऊँचे कर्म करने में तत्पर रहना चाहिए। इस संसार का तो जो बनेगा वह बनेगा ही इसमें क्यों जाते हो, इसमें क्या हैं?
जैसे तुमने महर्षि दयानन्द की आत्मा का प्रश्न किया, जब वह आत्मा शमीक ऋषि के रूप में थी तो वह इन्हीं वाक्यों का समर्थन करती थी। इन्हीं वाक्यों को ले करके उन्होंने त्रैतवाद को स्वीकार किया है। यदि उनके पुरातन के संस्कार नहीं होते शमीक ऋषि वाले, माँ का जो प्रीतिकर वाक्य था अटूटी जी, यदि वह माता इन्हे सुन्दर नहीं बनाती, तो यहाँ संसार में जैसा हमें प्रतीत हुआ है वायु मण्डल से, परमाणुवाद से, इस भयंकर काल में आ करके उस महान विभूति ने त्रैतवाद की घोषणा की और उनका वह शब्द अकाट्य रहा है। इसलिये उनका आदर करना चाहिए। उस पवित्र ऋषि आत्मा का आदर करना हमारा स्वभाव है, क्योंकि आदर करने में हमारा कोई अग्रित नहीं होता, हम अकटित नहीं होते। अन्यथा जहाँ एकवाद हो वहाँ त्रैतवाद की कोई महत्तता नहीं रह जाती है, वहाँ त्रैतवाद नहीं रह जाता है। इसलिये त्रैतवाद का प्रसार अधिक हुआ क्योंकि वह एकवाद से अधूरे थे। अधूरे इसलिये थे क्योंकि एकवाद वह प्राणी उच्चारण कर सकता है, जो मानव ब्रह्म के स्वरूप में अपनी आत्मा को परिणत कर देता है और वह अनुभव का विषय, एकवाद की घोषणा वह किसी भी काल में नहीं कर सकता। इसलिये हमारा जो यह वाक्य है वह इसलिये है क्योंकि वास्तव में संसार के प्राणियों में ज्ञान की प्रतिभा होनी चाहिए।12.04.1969
ऋषि दयानन्द जिनका मस्तिष्क वेद की आभा में ही रमण करता रहता था। आज मैं जब उनके वाक् प्रगट करने लगता हूँ तो मेरा हृदय इस भयंकर काल में कोई उत्तर नहीं देता। बौद्ध काल के पश्चात् ओर भी अनेक महापुरूष आए। परन्तु शंकराचार्य और

ऋषि दयानन्द दो ही ऐसे थे। जिनके द्वारा पाप का मूलन भी नहीं बना। पाप का अन्तःकरण भी नहीं बना, और प्रसार करके यहाँ से चले गए। ऐसे विचार पुनीत आत्माओं को ही आता है। आज जब मैं उनके विचार लेता हूँ। शंकराचार्य के मानने वालो का विचार लेता हूँ, तो शंकर की आत्मा अन्तरिक्ष में, व्याकुल हो रही है। और यदि इस संसार के संकलन को, संघर्ष को दृष्टिपात करता हूँ तो महर्षि दयानन्द का आत्मा भी अन्तरिक्ष में व्याकुल हो रही है। क्योंकि दोनों ही के विचार कितने पवित्र थे परन्तु मानने वाले कितनी दूरी चले जा रहे हैं। द्वेष की अग्नि की शान्ति के लिए प्रातः सायं दैनिक यज्ञ घर घर होने चाहिए।यह विचार आज हमें पुनः से लाना चाहिए। इस विचार को बुद्धि के लिए मस्तिष्कों के लिए विचारशील बनना चाहिए।17.10.1971

महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के यहाँ नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे। परन्तु एक भगवान राम ही विचित्र बने। आधुनिक काल में नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे। परन्तु जब शंकर ही ऊँचा बनें। जब मैं यह चर्चा करता हूँ कि मथुरा की जमनोत्री के किनारे, तट पर एक ही गुरु के यहाँ नाना शिष्य अध्ययन करते थे परन्तु एक ऋषि दयानन्द ही प्रतिभाशाली बने क्या नाना शिष्यों की आवश्यकता नहीं रहती। यह जो नाना प्रकार का गुड़म्बावाद है इसमें संस्कृति का हृस होता जा रहा है। जैसे यह भारत भूमि है परन्तु जो द्वितीय राष्ट्र हैं वह राष्ट्र आ आ करके इन्हें द्रव्य अर्पित करते रहते हैं। यह गुड़म्बावाद में दर्शन शास्त्र को नष्ट किया जा रहा है। नाना प्रकार का द्रव्य आ रहा है, दर्शन शास्त्र के विनाश करने के लिए। राष्ट्रीयता को नष्ट करने के लिए, राष्ट्रीयता जिनका धर्म और रूढ़ि बन गयी है तो वह इस समाज को कैसे ऊँचा बना सकते हैं? 12 03 1962

सतयुग के काल में, त्रेता के काल में हमारे दार्शनिकों के महान वाक्य थे, ग्रन्थ थें, वे अग्नि मे भस्म कर दिए। जब यह पुस्तकालय भस्म हो गए, तो अब क्या करें? अज्ञानता तो आनी ही थी। वेद किसी प्रकार बच गए? वेद किसी के गृहों में रह गए, किन्हीं बुद्धि मानव के कण्ठ में रह गए, उन्होंने वेद की विद्या का प्रसार किया। परन्तु यहाँ सब पुस्तकालय समाप्त हो गए। परन्तु अब वह विद्या कहाँ से लाएं? जैसा हम आपसे प्रश्न किया करते हैं कि वह प्रमाण अब क्यां नहीं मिलते? वे इसीलिए नहीं मिलते, क्योकि

वह पुस्तकालय ही अब समाप्त हो चुके हैं जिसमें हमारे पूर्व दार्शनिकों के वाक्य थे। यहाँ नाना सम्प्रदायें चलें। जातिवाद का बहुत बड़ा विवाद चल गया। राष्ट्र में जो कार्य होते, वे जातिवाद से चलने लगा। वेद व्यवस्था की जो विद्या थी, वह लुप्त होने लगी। इन विचारधारा वालों ने आ करके इस संसार को अधोगति में पहुँचा दिया। हमारी जो माताएं थीं, भगनियां थीं, वे बड़ी विदुषी थीं। महान माता सीता का आदर्श उनके समक्ष था परन्तु विद्या लुप्त होने के नाते माताओं की विद्या समाप्त हो गई। महान पुस्तकालय को समाप्त किया गया और अज्ञानता फैला दी। माताओं को बड़े बड़े कष्ट देकर तथा उनके साथ दुराचार कर, इस संसार को अधोगति में पहुँचा दिया। महान विद्यालय समाप्त कर दिए।

तो उसके पश्चात् अभी सौ वर्ष भी नहीं हुए हैं एक दयानन्द नाम के आचार्य आ पंहुचे। हमने तो कुछ ऐसा अनुभव किया है कि द्वापरकाल में जो महर्षि अटूटी थे उनकी आत्मा ने आ करके दयानन्द के शरीर में प्रवेश किया। यह संसार बड़ा अधोगति में चला जा रहा था। उन्होने माता पिता का ऐश्वर्य त्याग दिया और पूर्व ऋषियों का जो मार्ग था उसे अपनाया।

जैसे शंकराचार्य ने पूर्व महान आत्माओं के कथन को अपनाया ऐसे ही महान ऋषि दयानन्द ने यहाँ आ करके, संसार में ज्ञान का प्रसार किया। वह नाना मूर्ति पूजकों के समक्ष पहुँचे, शास्त्रार्थ किया। जैसे शंकराचार्य के ऊपर बड़ी बड़ी महान आपत्तियां आयी, इसी प्रकार ऋषि दयानन्द के समक्ष आयी, परन्तु पूर्वजन्म के ऋषि होने के नाते इस संसार का उत्थान करने के लिए, परमात्मा के नियमों का पालन करने के लिए वह संसार में आए और वेद की विद्या मिली, ग्रहण किया। ग्रहण करके, नाना पर्वतों में भ्रमण करके उन्होंने वेद की विद्या का प्रसार किया। उन्होंने उन शास्त्रों की वार्ताओं को अपनाया, जिन्हें हमारे जैमिनि मुनि ने हमारे गुरु ब्रह्मा आदि सबने अपनाया। दार्शनिक विषय को मान करके इस संसार में उसका प्रसार प्रारम्भ कर दिया। उन्हांने बड़ी ऊची वेद की विद्या को समक्ष कर दिया परन्तु जो मानव समझ नहीं पाते वे न समझें परन्तु वह वेद की विद्या के एक बहुत ही ऊँचे महान माने गए हैं।

भगवन्! आधुनिक काल में तो उन्हें महर्षि नाम की उपाधि प्राप्त हो गई है क्योंकि आधुनिक काल में ऐसा महान व्यक्ति जब आ जाता है तो संसार को कुछ देकर चला जाता है। आचार्य दयानन्द के सिद्धांत में बड़ी ऊँची वार्ता है जिसको हर व्यक्ति को मानना चाहिए। इस वेद की विद्या में कुछ लुप्तता हो गई है। इसकी कुछ संहिताएं नहीं मिली हैं जिनका अभी तक प्रसार नहीं हुआ है। कुछ ऐसा तो माना है कि ऋषि दयानन्द ने चारों वेदों की संहिताओं को तो नियुक्त कर दिया है परन्तु जब न मिलें तो और विचार कहाँ से लाते। उनका तो जितना ज्ञान था, उसका प्रसार कर गए। जैसे गुरुजी के द्वारा ज्ञान का समुद्र है ऐसे ही उनकी विद्या समुद्र थी क्योंकि पूर्व जन्म में अटूटी नाम के ऋषि थे, उन्हीं की आत्मा ने आ करके इस संसार का कल्याण करने के लिए जन्म लिया।

ऋषि दयानन्द ने ऐसा कहा है कि सत्य को मानने में किसी प्रकार की कोई हानि नहीं, परन्तु आधुनिक काल में उनके मानने वाले कुछ व्यक्ति ऐसे आ पहुँचे हैं उन्होंने वह सत्यता स्वीकार करना ही समाप्त कर दिया है। वह सत्यता को नहीं मानते, तो उनके वाक्यों में या उनके बनाए हुए जो महान नियम हैं उनको समाप्त करना प्रारम्भ कर दिया है। यथार्थ को यथार्थ मानने में किसी को किसी प्रकार की आपत्ति नहीं होनी चाहिए। उसको मान लेना चाहिए। संसार में बहुत सी ऐसी वार्ताएं हैं जो बुद्धि का विषय नहीं, बुद्धि से परे की वार्ताओं को विचारो, योगाभ्यास करो, आत्मा को परमात्मा के समक्ष पहुँचाओ। योग को जान करके संसार को जानने वाले बनो।

यह तो समय की परिस्थिति है। जैसा समय, वैसा ही वहाँ के व्यक्ति और वैसा ही उसका काल हो जाता है। इसमें व्याकुल होने का वाक्य नहीं, कि संसार अधोगति को चला गया। यह कोई नवीन वाक्य नहीं। जो वाक्य महाराजा कृष्ण ने कहा था वह वाक्य यथार्थ था। महाराजा कृष्ण ने कहा था कि आगे जो काल आने वाला है उस काल में महान को महान नहीं माना जाएगा, उन पर नाना प्रकार के आरोप लगाये जाएगें। जहाँ तक आत्मा परमात्मा का विषय है महर्षि शंकराचार्य ने और महर्षि दयानन्द दोनों ने ही इसकी व्याख्या की है। 09 11 1963

मुझे एक वाक्य और कण्ठ आ गया, महात्मा दयानन्द का, यहाँ महात्मा दयानन्द पुकारा जा रहा है आज तुम भी तो महात्मा दयानन्द बन करके देखो। तुम भी तो किसी पर दया करके देखो। आज तुम दयानन्द के चित्र को अपने गृह में स्थापित करते हो। परन्तु तुम वह दया की मूर्ति नही बनना चाहते। आज ऋषि दयानन्द को पुकारने से तुम्हारा कल्याण न होगा, जब तक तुम स्वयं दयानन्द न बनोगे, जब तक तुम स्वयं ब्रह्मचारी नही बनोगे, उस ऋषि दयानन्द ने अपने को ब्रह्मचर्य में रमण कर दिया था। योग रूपी बेला में रमण किया था। उन्होंने उस वेद को अपनाया, जिस वेद को अपनाने से इस संसार का कल्याण होता हैं। अरे, वह जो संसार में अपना कल्याण करके चले गये, परन्तु तुमने उनके आदेशों को भ्रष्ट कर दिया। आज तुम उनके आदेशों को लेकर चलो। उन्हें ब्रह्मचर्य में कितना आनन्द आया, तुम भी ब्रह्मचारी बनो, परन्तु यहाँ तो स्वप्न में भी नही रहा जाता, यह तो संसार हैं क्या वक्तव्य देने वाले को सदाचारी कहेंगें, अरे, सबसे पूर्व वक्तव्य देने वाला ही ब्रह्मचारी है नही तो वह संसार को कैसे सदाचारी बना सकता हैं।09.11.1963

मैं एक वाक्य कहा करता हूं कि जो भी ऊँचा मानव आता है, वह किसी न किसी वेद के अंग को ले कर ही चलता है। कोई सन्यासी उच्चारण करता है कि राष्ट्र में ऊँची विद्या होनी चाहिए, तो वेद का एक पवित्र अंग बन जाता है। जब इस प्रकार के विचार कोई भी मानव देता है तो वह इसमें वेद के एक न एक अंग को लेकर चलता है। आगे संसार अपनी बुद्धि के अनुकूल रूढ़िवाद में चला जाए तो वेद का कोई दोष नहीं और न यथार्थ पुरूष का कोई दोष हैं।

जैसा महात्मा शंकराचार्य वह वेदांत को लेकर चले, राजाओं को अपनाया और अपनाकर आगे चले। उन्होंने वेद के सर्वांश अंग को अपनाया। आगे उनकी मान्यता को ले करके चलने वाले इतने गम्भीर विषय पर न जा करके रूढ़िवाद में चले गये। इसमें वेद का कोई दोष नहीं। इसी प्रकार महात्मा दयानन्द की तुमने चर्चा प्रकट की कि वेद का संदेश लेकर त्रैतवाद को ले करके चले, वेद के प्रत्येक अंग को ले करके चले, आगे चलकर उनकी मान्यता वाले रूढ़िवादिता में आ जाएं, तो इसमें ऋषि दयानन्द जी

का या वेद का कोई दोष नहीं।
वेद सार्वभौम है, जितने भी महापुरूष होते हैं वेद के किसी अंग को अपनाया करते हैं पार्थिवता में, जड़ता की प्रधानता अधिक होती है और जहाँ अग्नि प्रधान होती है वहाँ चैतन्यता की प्रधानता अधिक होती है। तो जो सार्वभौम धर्म है उसकी जो मर्यादा है, कर्त्तव्य है वह सब वैदिकता में मानी जाती है। हो सकता है किसी स्थान में भिन्नता हो, परन्तु रूढ़िवाद वहाँ होता है जहाँ अज्ञानता छा जाती है। और जहाँ अज्ञानता नहीं होती वहाँ रूढ़िवाद नष्ट होता रहता है, ज्ञान के प्रकाश को लेकर चलता है। रूढ़िवाद वहीं आता है जहाँ स्वार्थ होता है। इसमें महापुरूषों का दोष नहीं।04.04.1965
मैं उच्चारण करने जा रहा था कि जहाँ अग्नि प्रधान होती है वहाँ रूढ़िवाद नहीं होता, क्योंकि वहाँ सूक्ष्मता अधिक होती है और वह सूक्ष्मता तुम्हें वेद में मिलेगी और कहीं नहीं मिलेगी और वेद की जो सूक्ष्मता है वह सार्वभौम है। 19 10 1965
यह वह भारत भूमि है जहाँ महाराजा भरत, सिंह के प्यारे पुत्रों को देखकर मग्न हुआ करते थे। सिंहनी को भी वह दूर किया करते थे। आज इस भारतभूमि पर, जो महाराजा भरत की एक पवित्र भूमि थी, वहां क्या हो रहा है? यह वह भारत भूमि है जिसमें महान आत्माओं का जन्म हुआ है महात्मा दयानन्द जैसे, महात्मा शंकर जैसे, महात्मा बुद्ध जैसे, महात्मा महावीर जैसे एक नहीं अनन्य आचार्यजन आये और आकर चले गये। यह वह भारत भूमि हैं जिसमें महान आत्माओं का जन्म हुआ है।
आज के राष्ट्र ने एक नाद बजाया। मैं यह नहीं जान पाया हूँ कि राष्ट्र में एकता क्यों नहीं आती? इसका कारण है कि यहाँ राजा के राष्ट्र में एक संस्कृति नहीं है। जब तक एक संस्कृति नहीं आएगी। मानव के विचार किसी काल में एकता पर नहीं आ सकते। जहाँ धर्म की प्रणाली और दार्शनिकता न हो वहाँ कोई भी कुछ उच्चारण करता रहे परन्तु वहाँ क्या बनता है। यहाँ तो महात्मा दयानन्द जैसे, महात्मा शंकर जैसे, महात्मा बुद्ध जैसे जिनका एक दार्शनिक नाद बजता था।
आज मैं महात्मा दयानन्द के ऊपर कुछ प्रकाश देना चाहता था। कई समय से दे भी चुका हूँ। मेरे पूज्य गुरुदेव तो यह उच्चारण करेंगे कि तुम तो बारम्बार कटुता उच्चारण

करते रहते हो। परन्तु मैं क्या करूं, मेरा स्वभाव बन चुका है। यथार्थ कहने में मुझे किसी का भय नहीं। यथार्थ उच्चारण करने से ही मानव का शब्द कटुता में परिणत हो जाता है। जब यहाँ महात्मा दयानन्द आये तो क्या था? द्वितीय राष्ट्र के राजाओं ने यहाँ क्या नहीं किया। मेरी माताओं के शृंगार को अपने में ग्रहण किया जाता था। उनके शृंगार को बचाने का जो प्रयत्न करता था उसी पर प्रहार किया जाता था।यह स्वार्थ मानव को किस काल तक रह सकता है? आज स्वार्थ से राष्ट्र चलता रहेगा तो धर्म की विजय नहीं होगी। सत्य और यथार्थता की विजय हुआ करती है। तो जब यहाँ तुम्हारी संस्कृति एक होगी, भाषा एक होगी, एक ही संस्कृति की छत्र छाया में प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या पनपने वाले होंगे, उसी काल में तुम्हारा भविष्य स्वर्णिम होगा। जब तक यह न होगा, तब तक राष्ट्र का स्वार्थ काल नष्ट न हो सकेगा।

आज मैं केवल एक आदेश देने चला आया और वह आदेश था महात्मा दयानन्द का एक नाद। महात्मा दयानन्द को एक व्याकुलता थी। वह परमात्मा की छत्र छाया में इस भूमि पर आए और वेद के नाद को लेकर चले। आगे आगे नाद है पश्चात् में संसार है। वह उसी नाद को बजाते चले गये। जिस समय मृत्यु को प्राप्त होने लगे, तो अपने पुजारियों से महात्मा दयानन्द ने एक ही वाक्य कहा था कि परमात्मा की इतनी अनुपम कृपा थी जो इतने समय तक जीवित रह सका। अब मैं मृत्यु को प्राप्त हो रहा हूँ, मेरी यही एक इच्छा थी कि शिक्षालयों में, ब्रह्मचारियों के द्वारा, ब्रह्मचारिणियों के द्वारा राष्ट्र में वेदों, उपनिषदों, आरण्यकों और ब्राह्मण ग्रन्थों का प्रसार होना चाहिए। प्रत्येक गृह में मनु जी का सिद्धान्त होना चाहिए। क्या करूं मैं शिक्षालयों में इतना प्रसार न कर सका। परन्तु महात्मा दयानन्द जो वाक्य कह चुके थे वही अधूरा रह गया। आज अपने को आचार्य उच्चारण करते हैं परन्तु राजा के राष्ट्र में मुझे कोई ऐसा शिक्षालय प्रतीत नहीं होता, जहाँ वेदों, उपनिषदों आरण्यकों और ब्राह्मण ग्रन्थों का पाठ होता हो। आज यह क्या है? क्या यह महात्मा दयानन्द का नाद था? उनकी एक ही इच्छा थी संसार में, और कोई इच्छा न थी। आज जो उनके पुजारी बने हुए हैं उनका क्या है। वह तो अपने स्वार्थ में इतने नेत्रहीन बन चुके हैं। एक दूसरे के प्रति इतनी घृणा आ चुकी है कि यह

घृणा क्या करेगी। महात्मा दयानन्द ने जो कार्य किया उसको भी ऐसे नष्ट करते चले जा रहे हैं जैसे सायंकाल का सूर्य अस्त हो जाता है। अन्धकार छा जाता है। विचारों में अन्धकार आ रहा है। अरे! ऋषि मुनियों के शास्त्रों में दर्शनों में उनकी लेखनी है। उन्हें रटन्त विद्या में रटते रहो, और प्रजा में उच्चारण करते रहो, उससे क्या होता है। जब तक उनके अनुकूल स्वयं न चलोगे तब तक उसके उच्चारण करने से कोई लाभ न होगा कोई प्रभाव नही होगा। चाहे ब्रह्मा बन करके आ जाओ, परमात्मा स्वयं आ जाए, क्या बनेगा? ऋषि दयानन् द ने मानवत्व के ऊपर, संसार के ज्ञान और विज्ञान को परिणात किया। संसार का जितना भी विज्ञान है, जितना भी वाक्य है सभी मानवत्व के लिए है। मैं एक आदेश और देना चाहता था कि यहाँ केवल महात्मा दयानन्द ही नहीं, यहाँ महात्मा शंकराचार्य भी जो सूक्ष्म समय में मृत्यु को प्राप्त हो गये, उन्होंने मानव को जागृत करने के लिए क्या नहीं किया। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके अनुयायी इतने स्वार्थी बन गए कि धर्म के एक अग्रहणीय बन गए। उन्होंने मानव के मस्तिष्क पर प्रतिबिम्ब लगा दिया। ज्ञान नहीं रहा, अनर्थ होने लगा, गौओं का भक्षण होने लगा। यहाँ माँस का भक्षण किया जाता है। यहाँ क्या नहीं होता? आज संसार किस प्रकार उन्नतिशील बन सकेगा? मैं केवल इस राष्ट्र के विषय में ही नहीं परन्तु आज यह संसार। किस प्रकार उन्नतिशील बन सकेगा? जब धर्म का क्षेत्र मानव के समीप न आएगा। मानव के जो विचार उत्पन्न होते हैं वह धर्म से होते हैं, संस्कृति से होते हैं। जहाँ संस्कृति होती है वहीं राष्ट्र, वहीं मानवता, वहीं चरित्रबल, वहीं विज्ञान, वहीं ज्ञान हैं। यह सब कुछ उसके अन्तर्गत आ जाता है।

आज इस राष्ट्र पर नहीं, जब द्वितीय राष्ट्रों पर विचार किया जाता है तो वहाँ क्या? वहाँ एक संस्कृति है जिसे वह लेकर चलते हैं। आज भारतभूमि में जहाँ भरत की पताका थी, महाराजा दुष्यन्त का राष्ट्र था, महारानी शकुन्तला जिन्होंने ऋषियों के कुल में जाकर शिक्षा प्राप्त की हो, उनका जो नाद था, वह केवल एक ही था कि राजा के राष्ट्र में ऊँची संस्कृति होनी चाहिए और उसी संस्कृति से मानव के विचार बनते हैं। जहाँ शिक्षालयों में ऊँची संस्कृति होती हैं वहाँ विद्यार्थियों के, ब्रह्मचारियों के विचार ऊँचे होते

हैं। जहाँ गुरुजन योग्य होते हैं वहाँ ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणी पवित्र होते हैं। कैसे पवित्र होते हैं? धर्म की चर्चाएं उनके समक्ष होती उनके मस्तिष्क पर तेज और ओज होता है। वह गृह में केवल सदाचार की चर्चा प्रकट करते हैं।

जहाँ कुछ शिक्षालयों में यही शिक्षा दी जाती है कि माँस का भक्षण करो तो और भी सुन्दर है, क्योंकि इससे रक्त अधिक उत्पन्न होता है। तो जहाँ ऐसी शिक्षा दी जाती हो तो अरे! क्या उन ब्रह्मचारियों को ब्रह्मचारिणियों, ऊँचा बनाया जा सकता है? तो यह असम्भव है। महात्मा नानक ने क्या सुन्दर एक वाक्य कहा है कि मानव के वस्त्र पर रक्त का एक चिह्न लग जाता है, वह जल से क्या, नाना प्रयत्न करो वही रह जाता है वह जाता नहीं। आज मानव के अन्तःकरण में, मानव के हृदय में जब किसी का रक्त जाता है, तो क्या उसका चिह्न मानव के हृदय में नहीं होगा, क्या वह किसी काल में नष्ट हो सकता है? महात्मा नानक के अनुयायी क्या करते हैं यह तो मैं पूर्व उच्चारण कर चुका हूँ। यदि गुरुदेव कल समय देंगे तो उच्चारण कर सकूंगा। महात्मा नानक ने मानव बल को ऊँचा बनाया। अपने प्यारे शिष्यों को एक नाद दिया कि धर्म की रक्षा करो। तुम्हारे केश जाए न जाएं परन्तु धर्म की रक्षा करो। आज तुम्हें भी रक्षा करने की शिक्षा दे रहा हूँ। महात्मा नानक के अनुयायियों ने धर्म की रक्षा की। यवनों द्वारा जब वीर बन्दा वैरागी के शरीर को नोचा जा रहा था तो मग्न हो रहा था और क्यों मग्न हो रहा था? क्योंकि वह महात्मा नानक के आदेशों को पूर्ण कर रहा था कि मैं धर्म पर अपने मानव जीवन को नष्ट कर रहा हूँ, जिससे मुझे कोई शोक नहीं है। अरे! यह थी उन महात्माओं की एक महान चिह्नता। हम उन्हीं के पद चिह्नों पर चले, जिससे हमारे मानवत्व में उच्चता आती चली जाए और हमारा जीवन विशाल बनता चला जाए।

आज मैं विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया। केवल गुरुदेव को यह उच्चारण करने आया हूँ कि यहाँ कैसे कैसे महान व्यक्ति हुए। महात्मा गोविन्द हुए जिनका आदर्श कितना ऊँचा था दोनों पुत्रों को धर्म की रक्षा के लिए यवनों द्वारा दीवार में चिनवा दिया। आज के इस राष्ट्र का क्या बनेगा, जो तुम स्वार्थ में इतना बहते चले जा रहे।

हाँ एक समय वह आएगा जब यह स्वार्थ तुम्हारे लिए विष का कार्य करता चला

जाएगा, क्या है स्वार्थ? दूसरों को नष्ट करने की भावना तुम्हारे अन्दर आ चुकी है। इसे अपने हृदय से दूर कर दो।

आज जब धर्म के क्षेत्र में जाता हूँ। तो वहाँ भी मैं स्वार्थ की भावना में एक दूसरे को नष्ट करने की भावनाओं की अग्नि को प्रदीप्त होता हुआ दृष्टिपात करता हूँ।

जब मैं आचार्य शंकर के पुजारियों में जाता हूँ तो वहाँ भी मुझे यही प्रतीत देता है।

जब मैं ऋषि दयानन्द के पुजारियों में जाता हूँ तो वहाँ भी मुझे प्रतीत होता है।

जब महात्मा नानक के पुजारियों में जाता हूँ तो वहाँ भी मुझे यही प्रतीत होता है।

जब वीर बन्दा बैरागी के पुजारियों में जाता हूँ तो वहाँ भी यही प्रतीत होता है।

विवेकानन्द के पुजारियों में जाता हूँ तो वहाँ भी यही प्रतीत देता है। यह अग्नि कैसी प्रदीप्त हो गई है? यह अग्नि कैसे शान्त होगी?

अग्नि को शान्त करने का कोई साधन है तो वह मानव के द्वारा मनोबल है, विचार बल है, एकान्त में विराजमान होकर विचार विनिमय करो। धर्म को व्यापक बनाओ।

मिथ्या को, कोई भी संसार में सत्य उच्चारण नहीं करता। सब उसको मिथ्या उच्चारण करते हैं। चाहे वह मोहम्मद के पुजारी हों, महावीर के पुजारी हों, बुद्ध के पुजारी हों, ईसा के पुजारी हों या शंकर और दयानन्द के पुजारी हों। मिथ्या को सदैव मिथ्या ही कहा जाता है और सत्य को सत्य ही उच्चारण करते हैं। इसी का नाम धर्म है। कितना व्यापक शब्द भी जिसका कोई प्रमाण नहीं।

आज के मानव को अपने खान पान पर और अपनी संस्कृति पर विचार विनिमय करना चाहिए। बुद्धिमान ब्राह्मणों का कर्त्तव्य है कि वह राजा से जाकर उच्चारण करें कि अपने राष्ट्र में एक संस्कृति को उत्पन्न करे। यहाँ संस्कृति किसे कहते हैं? संस्कृति उसी को कहते हैं जहाँ सदाचार और मानवता एक ही आँगन में निर्णय की जाती हो। मनोबल उसी से ऊँचा बनता है। मनोबल एक दूसरे से घृणा करने से ऊँचा नहीं बनता। आज के संसार को घृणात्मक दृष्टि से न पान करो। इस मानव मात्र को आर्य बनना है। भारतभूमि को रामराज्य बनाना है। इसको कृष्ण राज्य बनाना है। वहाँ एक संस्कृति होनी चाहिए अपने स्वार्थ के वशीभूत यहाँ विचारों को नष्ट न करो। हमारी संस्कृति

परम्परा से है जो ऋषि मुनियों की प्रणाली है। वही ऋषि दयानन्द की प्रणाली है, उसी को अपनाया जाएगा। उसको अपनाए बिना भारतभूमि किसी भी काल में ऊँची नहीं बन सकेगी। आज मैं यह जानता हूँ कि इस भारतभूमि पर जहाँ रेवती ऋषि महाराज रावी के तट पर परमात्मा का चिन्तन किया करते थे वहाँ क्या हो रहा हैं आज वहाँ रक्त की धारा बहती चली जा रही है। इसका कारण केवल स्वार्थ है। रक्त की धारा तब ही बहती है जब मनुष्य में स्वार्थ आता है। उस राजा के राष्ट्र में रक्त की धारा बहती है, जिसके राष्ट्र में आन्तरिक और बाह्य दोनों विचार अशुद्ध हो जाते हैं। जिस राजा के राष्ट्र में एक विचार, एक संस्कृति और उस संस्कृति के अनुकूल एक धर्म होता है तो उस राजा के राष्ट्र की सीमा पर रक्त की धारा नहीं बहती। यहाँ और भी प्रश्न आते हैं, मैं ही उन तर्कों को किया करता हूँ कि महाभारत के काल में एकता थी तो क्यों संग्राम हो गया? परन्तु वहाँ भी स्वार्थ था। वहाँ भी संस्कृति से दूर चले गए थे। संस्कृति का अभिप्राय यह नहीं कि एक भाषा आ गई तो हम संस्कृतज्ञ बन गए। संस्कृति का अभिप्राय यह है कि उनके ऊपर हम स्वयं चालक बनें और उनके अनुकूल हम अपने जीवन को चलाने का प्रयत्न करें जिससे आगे चल करके जीवन साहसी, विचारवादी और उच्चता को प्राप्त होता चला जाए।

मेरे गुरुदेव भी कहा करते हैं कि विजय वहाँ होती है, जहाँ विजय के लक्षण होते हें, जहाँ मानव के विचारों में शुद्ध क्रान्ति, महान क्रान्ति, कर्त्तव्यपरायणता और एकता होती है वहाँ विजय अवश्य हुआ करती है। कोई भी आकर अनीति से विजय करना चाहता है तो वह नहीं हो सकती। परमात्मा सबका रक्षक है। परमात्मा ही मनुष्य की रक्षा करता है। मानव अपनी स्वार्थ की अग्नि को त्याग करके सत्यता की अग्नि पर आ जाए। पवित्र वेदी पर आ जाए जहाँ सुगन्धि उत्पन्न हो उसे पान करो जहाँ दुर्गन्धि उत्पन्न होती हो, उसे पान न करो, उस वेदी पर न जाओ, उसको छुओ भी नहीं। जब उसको छुओगे नहीं तो सुगन्धि आएगी और जब सुगन्धि आएगी तो वायुमण्डल शुद्ध होगा, पवित्र रहेगा।19.10.1965

मैं तुम्हें उन धाराओं का निरीक्षण कराता चला जाऊँ जिन धाराओं में मानव जीवन के

अंकुर होते हैं। आज हम उस पूजा के रहस्य को जानें। परन्तु महर्षि शमीक मुनि जी की पवित्र आत्मा ने आकर संसार में पुनः जन्म लिया। संसार के कल्याणार्थ महर्षि शोकण ऋषि आचार्य शंकर की पवित्र आत्मा ने भी संसार के कल्याणार्थ जन्म लिया। यह जो महान आत्माएं होती हैं यह संसार का कल्याण करने के लिए आती हैं। शमीक मुनि महाराज जब संसार में पुनः से आए तो उनका नाम ही मूल रूप में वर्णन कराया। मूल ने सबसे पूर्व मूल वेद को लिया। जो शंकराचार्य हुए वह शोकण मुनि महाराज की पवित्र आत्मा थी और जो यह आचार्य दयानन्दः उस महान विभूति आत्मा की जिसे माता प्यार और स्नेह में आ करके अटूटी नामों से उच्चारण किया करती थी वही शमीक मुनि की पवित्र आत्मा ने पुनः से संसार में जन्म लेकर लोक कल्याणार्थ अपने जीवन को न्यौछावर किया। जो ऋषि दयानन्द कहलाए।

आज मैं यह कहा करता हूँ कि आज जो ऋषि दयानन्द की पवित्र वेदी है उस वेदी पर ऋषि दयानन्द का पुनः से कार्य करने के लिए कोई ऋषि दयानन्द पैदा हुआ या नहीं? मुझे एक बड़ी ही व्याकुलता रहती है और प्रभु से कहा करता हूँ कि हे प्रभु! हे देव! जहाँ ऐसी विभूति जाती हैं वहाँ उसके दायित्व वाला भी कोई न कोई होना चाहिए न कि द्रव्यपति बन करके आलोचनाओं में रमण करते हुए अपने जीवन को न्यौछावर करने वाले बनें। क्या इसी को आज हम मूल की वार्ता कहेंगे, क्या इसी को शमीक ऋषि के आदेश और उनकी आत्मा की जो वेदना है वह यही पुकारती है कि आज हम दूसरों के प्रति कट्टरता को लेकर न चलें? वह यह कहा करती है कि मानवता के क्षेत्र पर आ जाओ। मानववाद को लाने में संलग्न हो जाओ, राष्ट्र के प्रति कितनी वेदना थीं। जिस समय पाश्चात्य अंग्रेजियों से जहाँ वह वार्त्ता प्रकट करते वहां वह यह भी कहा करते कि जो दूसरे देश का शासक है वह मुझे सुन्दर प्रतीत नहीं होता। जो इतना निर्भय हो और ऐसा नाद करने वाला हो क्या उस आत्मा को हमारे हृदय से दूर किया जा सकेगा? कदापि नहीं। दूसरी वेदना भी थी कि राष्ट्र में चरित्रवाद को लाना है। इसके लिए ब्रह्मचारियों के, भिन्न भिन्न विद्यालय होने चाहिए। जिसमें दोनों पवित्रता में ओत प्रोत हो जाएं। उनकी जो शिक्षा की पद्धति हो आरण्यक हो, उपनिषद हो, जिसमें उनका

मानववाद और चरित्रवाद ऊँचा बनता चला जाए। जिससे ऋषि मुनियों का चरित्र उनके समीप हो। उन्हीं को लेकर मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कई समय से राष्ट्र के प्रति उच्चारण करते चले आए हैं। परन्तु मैं तो आज ऋषि दयानन्द के मानने वालों से ही प्रार्थना कर सकता हूँ कि उनकी वेदना केवल यही थी कि अपने ऋषि मुनियों की पद्धति शिक्षालयों में जानी चाहिए जिससे हमारा राष्ट्र पूर्वकाल जैसा महर्षि पतंजलि का संसार बन जाए। आज यह संसार स्वार्थियों और दुराचारियों का नहीं रहना चाहिए। जब राष्ट्र में स्वार्थवादियों का साम्राज्य हो जाता है तो वह विनाश के मार्ग को और भ्रष्टाचार की धारा से परिणत हो जाता है। जहाँ मेरी कन्याओं का आदर नहीं होता। आदर के स्थान पर कुदृष्टिपान किया जाता है, उनके जो दूषित विचार होते हैं वह गृह को भी दूषित करते है और अपने राष्ट्र को भी दूषित किया करते हैं। राष्ट्र में भ्रष्टाचार अंकित हो जाता हैं।

मैं तो आज केवल ऋषि दयानन्द के मानने वालों से प्रार्थना ही कर सकता हूँ कि तुम अपने विद्यालयों में ऋषि मुनियों की पद्धति को लाओ। सांख्यवाद, वेदान्तवाद, पतंजलिवाद आदि को क्यों नहीं लाते जिससे तुम्हें प्रतीत हो कि तुम्हारे दर्शनों में क्या है? आज हमें जो विज्ञान प्रतीत हो रहा है उसके लिए हमारा यह विश्वास है कि सब कुछ विज्ञान पाश्चात्य से प्राप्त हो रहा है परन्तु वह विज्ञान तो हमारे दर्शन शास्त्रों में है। आज जब हम महर्षि पतंजलि जी के कहे हुए सिद्धान्तों को लेते हैं तो उन्होंने इतने मौलिक विचारों को प्रकट कर दिया है कि उनसे बाहर न कोई सिद्धान्त है और न मौलिकता ही।

मैं बहुत पूर्व से उच्चारण करता चला आया हूँ कि यहाँ महात्मा दयानन्द से पूर्व महात्मा नानक का जन्म हुआ जिसने अपना जीवन राष्ट्र के लिए न्यौछावर किया। यवनों से संग्राम करने के लिए उन्होंने एक धारा निर्धारित की। परन्तु मैं महात्मा दयानन्द के पुजारियों से कहा करता हूँ कि तुम इतने नम्र बन जाओ, इतनी वैदिकता पर आ जाओ कि जिससे तुम महात्मा नानक का जो आदेश था उसकी पूर्ति भी तुम्हीं कर सकते हो, क्योंकि जो नानक के पुजारी हैं वह तो हिंसा में लग गए हैं महात्मा नानक की वही

वेदना थी जो महर्षि पतंजलि की थी, जो महात्मा प्रवाहण की थी, जो अगस्त मुनि जैसों की थी। उस वेदना को क्यों नहीं लाया जाता? इसलिए नहीं लाया जाता क्योंकि संसार में स्वार्थ आ चुका है। स्वार्थ के कारण आर्यों की पद्धति नष्ट होने जा रही है। आज कौन ऋषि दयानन्द बनकर आएगा और अपने शिक्षालयों में पुनः से नाद बजाएगा कि आज मैं वैदिकता को लेकर आया हूँ। आज शंकराचार्य के पुजारियों से कहा करता हूँ कि आओ, आज कौन शंकर बन करके आता है, वेदान्त को लेकर कौन आता है? जहाँ सबमें ब्रह्म प्रतीत होता हो तो वहाँ न किसी से घृणा प्रतीत होती है न किसी से कटुता होती है। वहाँ तो केवल मानवता के अंकुर होते हैं, वहाँ एक विचित्रवाद होता है। उस विचित्रवाद को अपनाना चाहिए जिससे हम संसार में वैज्ञानिक बन सकें। परन्तु विज्ञान कहाँ से आता है? हमारे यहाँ कपिल मुनि महाराज ने जितनी धातुओं को निर्धारित किया है उतनी धातुओं को आज तक कोई चुन ही नहीं सका है। वेदान्तवाद के सम्बन्ध में हमारे यहाँ महर्षि जैमिनी ने जहाँ तक दर्शनों में अपने उल्लेखनीय विचारों को प्रकट कराया है उससे अधिक को कोई प्रकट कर ही नहीं सका है।

आज मेरे हृदय में एक वेदना है और वह वेदना यह है कि आज इस कलियुग में महात्मा दयानन्द, महात्मा शंकराचार्य हुए, उनकी वेदना पूर्ण नहीं हो रही है, यह कितनी सूक्ष्मता है। उन्होंने एक ही आदेश दिया आर्यों को, कि स्वयं आर्य बनो कन्याओं को भिन्न स्थान में शिक्षा दिलाओ, और ब्रह्मचारियों को भिन्न स्थान में आरण्यक, शतपथ, उपनिषद् और दर्शन शास्त्रों की शिक्षा दिलाओ। जब शिक्षालयों में ऊँची शिक्षा होगी तो ब्रह्मचारी ऊँचे होंगे और राष्ट्र स्वयं ऊँचा बनता चला जाएगा। परन्तु इस कार्य को पूर्ण कौन करेगा? इसको वहीं पूर्ण करेगा जो अपने जीवन को तपस्वी बनाएगा, ऋषि दयानन्द की भाँति तपस्वी बनाएगा। कैसा तपस्वी? ऋषि दयानन्द वहाँ जाते थे जहाँ वज्रों की वर्षा होती थी। आज यही उनकी त्याग और तपस्या का परिणाम है कि उनके जो वज्र थे वह पुष्प बने और इनके जो पुष्प हैं वह वज्र का कार्य बनते चले जा रहे हैं। मैं आज अपने उन विचारों को प्रकट कर रहा हूँ जिससे आज हमें यह प्रतीत हो जाए कि हमारे यहाँ वैदिकता क्या है? वैदिकता वही है जो हमे महात्मा शंकराचार्य और

महात्मा दयानन्द ने निर्णय कराया। महात्मा शंकराचार्य वहाँ जाते थे जहाँ बौद्धों और जैनियों के आक्रमण होते थे। जहाँ मृत्युदण्ड तक देने की योजना बनाई जाती थी और आज उनके मानने वाले जो गुरु बने हुए हैं वह वहाँ जाते हैं जहाँ पुष्प होते हैं। अब उनके अनुयायी कहाँ जाते हैं? जहाँ उनके द्वारा ऊँचे ऊँचे छत्र हों। धिक्कार है उनके जीवन को, जहाँ शंकर और मूलशंकर दोनों की वार्ताओं को पूर्ण नहीं किया जाता। यह क्या है? वह उनकी आत्मा की त्याग और तपस्या की सूक्ष्मता है।

पूज्यपाद गुरुदेव मेरे हृदय की जो वेदना है वह एक ही है कि ऋषियों को लेकर चलो। उससे तुम्हारे जीवन की धारा ऊँची बनेगी अन्यथा किसी भी काल में न बन सकेगी। त्याग और तपस्या के सम्बन्ध में गुरुदेव नित्यप्रति उच्चारण किया करते है। कि त्यागी और तपस्वी ही संसार में जीवित रह सकेगा। कैसे मानव त्यागी और तपस्वी होता है? जो यथार्थ उच्चारण करता है और यथार्थ आचरण करता है उस पर आपत्तियाँ आती हैं। कैसी आपत्तियां आती हैं।

गुरुदेव! जहाँ ऋषि दयानन्द जाते थे वहाँ उन पर वज्रों की वर्षा होती थी और वे वज्रों की वर्षा को कहा करते थे कि एक समय ये मेरे पुष्प बनेंगे। ऐसे ही महात्मा शंकराचार्य कहा करते थे जब उनको नष्ट करने के लिए आक्रमण होता था तो वह कहते थे कि कि ये मेरे लिए पुष्प का कार्य करेंगे। जहाँ त्यागी, तपस्वी और हृदय में इतनी सांत्वना हो, वही उनकी वार्त्ताओं को पूर्ण कर सकेंगे। अन्यथा न हो सकेंगी। जो मान अपमान में संलग्न रहते हैं वह आज ऋषि दयानन्द और आचार्य शंकर के वाक्यों को पूर्ण न कर सकेंगे। वही कर सकेंगे जिनके द्वारा त्याग, तपस्या और जो द्रव्य की लोलुपता को त्यागने वाले हों।

एक समय महात्मा शंकर से विरोधियों ने कहा हे महात्मा शंकराचार्य! आप हमारा खण्डन न कीजिए, हमारा जो द्रव्य है उसे अपनाइये। उस समय शंकराचार्य ने कहा मैं इस द्रव्य को क्यों अपनाऊं। मुझे परमात्मा ने इतना ऊँचा द्रव्य दिया है जो मुझसे जाना नहीं जा रहा, इस द्रव्य को मैं क्या करूंगा। आज जो कार्य प्रभु ने मुझे दिया है उस कार्य को करूंगा। कितनी दृढ़ता थी उनके द्वारा। द्रव्यों को अपने पगों में ठुकराने

वाले, परन्तु आज शंकराचार्य के पुजारी क्या करते हैं उसको मैं अच्छी प्रकार निर्णय नहीं करूंगा। वही किया करते हैं जो साधारण व्यक्ति किया करते हैं।
इसी प्रकार महात्मा दयानन्द की चर्चाएं आती हैं। उन्हें भिन्न भिन्न प्रकार के द्रव्य की लोलुपता दी गई परन्तु वह कहा करते मुझे नहीं चाहिए। आज मुझे इनकी इच्छा नहीं। मुझे इच्छा है अपने राष्ट्र की, अपने समाज की। मेरी पवित्र माताएं सब अपने कर्त्तव्य का पालन करें। वेद के अनुयायी बनें, वेद के प्रकाश को जानें, वेद के मर्म के ज्ञानी बनें। यह उनका एक आदेश था, इसी आदेश पर चलें। वज्रों के आक्रमण होते हैं परन्तु आज कौन है उन वार्ताओं को पूर्ण करने वाला? जो नाद से कहा करता है कि शिक्षालयों में आरण्यक, शतपथ, वेदान्त, सांख्य दर्शन इत्यादियों की शिक्षा होनी चाहिए। कहाँ है उनकी वार्ता? संसार ने उनकी वार्ता को उलट दिया। आज मैं कहा करता हूँ, हे परमात्मन्! हे देव! संसार को, भारतभूमि को पुनः से ऊँचा बनाना है तो भगवन्! महात्मा दयानन्द जैसे योगी उत्पन्न करें, जिससे संसार ऊँचा बन जाए। प्रभु! मेरी यह वेदना है आप स्वीकार कीजिए। यह संसार तो भगवन्! इसी प्रकार चलता रहेगा। आज के मानव केवल एक रसना पर आ गए हैं। मांस भक्षण पर आ गए हैं। मांस को भक्षण करते जाओ। आज जो जल का शोधन करती है, जो पशु हमें दुग्ध देते हैं उनके प्रति इन्हें विवेक नहीं। आज यह मानव नहीं, अमानव के क्षेत्र में चला जा रहा है। उस वेदी पर चला गया है जिस वेदी पर अमानव का चुनाव होता है। मृगों के, पशुओं के आहार को अपना लिया है और क्यों अपना लिया है? कहते हैं कि राष्ट्र में अन्न उत्पन्न नहीं होता। अरे! अन्न क्यों उत्पन्न होगा, जब तुम इन आहारों को भक्षण कर जाते हो। पृथ्वी तुम्हें अन्न नहीं देगी। क्यों नहीं देगी? इसलिए नहीं देगी क्योंकि तुम अपने आहार व्यवहार को दूसरों के आँगन में ले गए हो। यदि तुम्हारा स्वयं का, अन्न का भक्षण होता तो यह हो नहीं सकता था कि पृथ्वी माता तुम्हें अन्न न देती।28.07 1966
ज्ञान और विवेक के द्वारा इस परिवार को संयम में करना है, इसके लिए परमपिता परमात्मा ने इसको विचारने के लिए वेद दिया है। वेद रूपी प्रकाश इसी को विचारने के लिए दिया है। अब जो आत्मा, जो मानव केवल इसी दिशा में स्थिर कर लेता है कि

ज्ञान और प्रयत्न दोनों तेरे शरीर में है, इसमें तुझे ऐसे रहना है जैसे जल में कमल रहता है। वह उसी काल में रह सकता है जब दसों प्राणों का ज्ञान हो और मन का जो विभाजन करता है मन का ज्ञान हो, उसका विभाजन न होने दो। जब विभाजन नहीं होने दोगे और दसों प्राणों को एकाग्र करने का प्रयत्न करोगे तो शनैः शनै तुम जड़भरत की भाँति रहोगे, क्योंकि जड़भरत वह जिसे कर्म नहीं व्यापते, जैसे भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा था कि हे अर्जुन! मैं समय समय पर जन्म लेता हूँ, परन्तु यह जो संसार के कर्म हैं यह मुझे नहीं व्यापते। जैसा महानन्द जी ने कल महात्मा दयानन्द की वार्त्ता प्रकट की तो प्रतीत होता है कि वह पूर्व जन्म की ऐसी विभूति थी जो संसार में आकर के संसार के कर्म, उस महान विभूति को नहीं व्यापे। क्यों नहीं व्यापते? इसलिए नहीं व्यापते क्योंकि उनका जो मन है वह संस्कारों से इतना नियंत्रण में है कि वह ऐसी कामनाओं को उत्पन्न नहीं करते जिससे मानव के शरीर का मानसिक जो विकास है उसका हनन होता चला जाएं।

हमारे यहाँ कर्मों की गति बड़ी विलक्षण है। अपने अपने संस्कारों से मानव बड़ा लज्जित होता रहता है क्योंकि उसके संस्कार ही इस प्रकार के हैं। इसलिए कहा है ब्रह्मचर्य आश्रम में ऐसे ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी बने। जिससे तुम्हारे द्वारा जो अमृत रूपी निधि है उसे अपने से दूर न जाने दो। ब्रह्मचर्य की रक्षा करो। ब्रह्मचर्य के पश्चात् गृहस्थ आश्रम आता है। गृहस्थ आश्रम में इच्छा के अनुकूल एक महान संतान को जन्म दो जैसा आज के वेदपाठ में भी आता चला जा रहा था। हे माताओं! तुम्हारे ऊपर संसार का एक बहुत बड़ा ऋण है। आज उस ऋण से उऋण हो जाओ। कौन माता उऋण होती है? वह माता संसार में उऋण होती है जो भगवान राम जैसे बालक को जन्म दे, जो ऋषि दयानन्द जैसी आत्मा को जन्म दे, शंकराचार्य जैसी आत्मा को जन्म दे, महर्षि कपिल और महर्षि व्यास जैसी आत्माओं को जन्म दे। त्वचा को सजाने से संसार में ऋण से उऋण नहीं हुआ जाता, ऋण से उऋण तो उस काल में हुआ जाता है जब गर्भाशय पुष्पों से सजा होता है, जिसके पवित्र गर्भाशय से भगवान श्रीकृष्ण जैसों का जन्म हो, जो त्याग मूर्ति हो, जिनके द्वारा त्याग और तपस्या की कोई सीमा न हो, जो

माता शाकल्य मुनि जैसी योगी आत्मा को जन्म देने वाली हो वह माता अपने ऋण से उऋण हो सकती है अन्यथा यहाँ तो ऋण का ऋण ही रहता है। संसार में ऋणी मनुष्य किसी भी काल में नहीं पनपता। आज कोई मानव कहे कि मैंने किसी से द्रव्य ले लिया मैं उसी का ऋणी हूँ परन्तु यह कोई ऋण नहीं होता। ऋण वह होता है कि जिस कार्य के लिए हम आए हैं उस कार्य को न करें तो वह सबसे बड़ा ऋण कहलाता है। जैसे एक राजा होता है, प्रजा ने उसे राजा बना दिया पंरतु यदि वह प्रजा के हित में कार्य नहीं करता, उनके मानसिक विचारों के अनुकूल कार्य नहीं करता तो वह राज्य का एक बहुत बड़ा ऋणी कहलाता है। उसे वह ऋण देना पड़ेगा। यहाँ नहीं देगा तो अगले जन्म में देगा। पंरतु देगा अवश्य। जहाँ तक किसी के द्रव्य को लेते है तो वह भी ऋण है। मैं यह नहीं कहता कि वह ऋण नहीं होता परन्तु सबसे बड़ा जो सूक्ष्म ऋण है वह है देवताओं का ऋण। देवताओं के समीप आएं और उनके अनुकूल कार्य न कर, सके तो हम उनके ऋणी रहते हैं। आज हम ऋण से उऋण होते चले जाएं। जो माताएं त्यागी और तपस्वी होती हैं और जो भगवान राम, भगवान कृष्ण, महर्षि कपिल, महर्षि पतंजलि, वेदव्यास, महर्षि जैमिनि, महाराजा सुखदेव, राजा जनक महाराजा रेवक, महाराजा हरिश्चंद्र आदि जैसी आत्माओं को जन्म देती हैं वह माताएं देवताओं के ऋण से उऋण हो जाती है।

मेरी पवित्र माताओं को ऋण से उऋण होना चाहिए। कीड़ों को नित्य प्रति जन्म न दो। महर्षि कपिल और महर्षि व्यास जैसों को जन्म देर कर ऋण से उऋण होती चली जाओ। यहाँ केवल ऋषि दयानन्द की आवश्यकता है, एक शंकराचार्य की आवश्यकता है, एक महर्षि कपिल और एक महर्षि व्यास जैसे ब्रह्मचारियों की आवश्यकता है।29.07.1966

संसार में सौ जन्म धारण करने के पश्चात् भी अनुशासन नहीं आएगा, इसलिए राजा और ब्राह्मणों की विचारना होगा कि हम किस प्रकार से ऊँचे बनें।

समाज का कल्याण करना है तो ब्राह्मणों को, उस राजा को चुनना चाहिए जो त्याग और तपस्या में परिणत होने वाला हो, आर्यावर्त की पद्धति आज नष्ट नहीं हुई, बहुत

समय हो गया है। लगभग साढ़े पांच हजार वर्ष हो चुके हैं। महाभारत काल के पश्चात्, पद्धति नष्ट होने के पश्चात् महान आत्मा आयी, वह उपदेश देकर चली गई। शंकराचार्य आए वह उपदेश देकर चले गए। मूलशंकर आए वह उपदेश देकर चले गए। इस समाज ने क्या किया? मुझे स्मरण है आज मूलशंकर जिसको ऋषि दयानन्द के नाम से पुकारते हैं उनके तेरह जन्मों की तपस्या का परिणाम है कि जिससे यह समाज ऊँचा बना है। जैसे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने प्रकट किया था कि इस ऋषि आत्मा का इससे पूर्व जन्म शमीक ऋषि मुनि का था, उससे पूर्व जन्म कोकोत ऋषि महाराज का था, उससे पूर्व का जन्म सोमपान ऋषि का था, उससे पूर्व कुर्केतु ऋषि महाराज का था। इसी प्रकार तेरह जन्मों की तपस्या की पवित्र आत्मा ने आकर पवित्र आदेश दिया। परन्तु इसके लिए तुम क्या कर रहे हो, ऋषि दयानन्द ने अपने वाक्यों में एक वाक्य कहा कि बुद्धिमान ब्राह्मणों को श्रेष्ठ राजा चुनना चाहिए परन्तु जो मैं दृष्टिपात कर रहा हूँ वह ऋषि की भावनाओं के विपरीत हो रहा है। जो साधारण प्रजा है जो यह नहीं जानती कि धर्म किसे कहा जाता है वह राजाओं का चुनाव करती है। तो क्या, जो प्रजा यह नहीं जानती कि धर्म किसे कहते हैं, समाज किसे कहते हैं, राजा किसे कहते हैं, तो उनका चुना हुआ जो राजा होगा वह मूर्ख होगा या बुद्धिमान? मैं तो यह कहा करता हूँ कि मूर्ख होगा। क्योंकि वह लाभ और हानि को किसी काल में विचारेगा ही नहीं। जो राजा बनने के पश्चात् लाभ और हानि को नहीं विचारेगा तो क्या परिणाम होगा? उसका परिणाम भयंकर होता है। आज अकाल पड़ रहे हैं। अन्न उत्पन्न नहीं हो रहा है। वसुन्धरा ने अन्न देना शान्त कर दिया है। इसका कारण क्या है? यह कारण जानना होगा।13.11.1966

मुझे स्मरण है कि जब ऋषि दयानन्द अपने एक आँगन में विराजमान हो करके किसी वाक्य की घोषणा करते थे, तो वह कहा करते थे यह मूर्ति पूजा नहीं होनी चाहिए, यह इस राष्ट्र को, इस समाज को नीचे ले जाएंगी तो उनका वाक्य ऐसे कार्य करता जैसे त्रेता काल में राम का बाण रावण की सेना में कार्य करता था। इसी प्रकार वह कार्य करता चला जाता था। आज कहाँ है वह क्रान्ति? आज के मानव को उच्चारण कुछ

करना है परन्तु उच्चारण कुछ करने लगता है तो उनका प्रभाव उनकी यौगिकता सब नष्ट भ्रष्ट हो जाती है, विचारधारा नहीं रह पाती। विचारता में मानव को परिणत होना है। आज जिनको यहाँ राष्ट्रपिता कहा जाता है वे कुछ कुछ अहिंसा को ले आएं, वह जो घोषणा करते थे तो राष्ट्र में एक क्रान्ति अहिंसा को जाना, वह जो घोषणा करते थे तो राष्ट्र में एक क्रान्ति आ जाती थी, उस क्रान्ति का परिणाम है कि जो द्वितीय राष्ट्र के पराधीन थे उन्हें स्वतंत्र बना दिया। यही होता है यथार्थ क्रान्ति। यह कैसे आती है? यह तब आती है जब आत्मविश्वास होता है। आज राष्ट्र में कुछ ऐसी क्रान्तियां होती रहती हैं कहीं गौ के सम्बन्ध में है तो कहीं किसी वाक्य को मनाने के लिए क्रान्ति की जा रही है। अरे मानव! तुम स्वयं तो उस वाक्य को विचार लो, जो तुम क्रान्ति करने जा रहे हो, जो तुम आन्दोलन करने जा रहे हो उसका परिणाम क्या होगा तुम्हारा हृदय इतना विशाल भी है कि यदि कोई राष्ट्रवेत्ता तुम्हारे प्राण भी लेने लगे तो प्राणों को दे सकते, हो अथवा नहीं दे सकते या पद की लोलुपता तो नहीं है। यदि इस प्रकार की विचारधारा नहीं रहेगी, तो वह मानव इस राष्ट्र में यथार्थ क्रान्ति नहीं ला सकता है, उस क्रान्ति के लिए आत्मबल की आवश्यकता है, प्रभु विश्वास की आवश्यकता है। जब तक उसे प्रभु का विश्वास नहीं होता, अपने आत्मा का विश्वास नहीं होता तब तक वह यथार्थ क्रान्ति ला ही नहीं सकती।

यथार्थ क्रांति कैसे आ सकती है? आहार और व्यवहार दोनों को ऊँचा बनाया जाएं, इस पर चिन्तन किया जाएं और जब विचारधाराएं पवित्र होती हैं, महानता में लाने के लिए सदैव तत्पर रहता है और आत्मविश्वास होता है, प्रभु उसके आँगन में होता है और छल कपट से दूर होता है, तो वह प्राणी संसार में राष्ट्र में यथार्थ क्रान्ति को लाने वाला बनता है।

मुझे तो बड़ा आश्चर्य आता है जब मैं ऋषि दयानन्द और शंकर के पुजारियों के द्वारा जाता हूँ। घोषणा कुछ है और उच्चारण कुछ और है कार्य कुछ हो रहा है। यह सब क्या है यह समय का और उनके आहार और व्यवहारों की महिमा है। जब मैं और भी महापुरूषों की चर्चा करता हूं तो हृदय गद् गद् होने लगता है परन्तु यहाँ सब कुछ क्या

हो रहा है कुछ नहीं कहा जा सकता।

यहाँ व्याख्याताओं की आवश्यकता नहीं, क्रियात्मकवादियों की आवश्यकता है। यहाँ केवल ऋषि दयानन्द के नाम को उच्चारण करने की आवश्यकता नहीं, उसके कार्य करने की आवश्यकता है। यहाँ भगवान कृष्ण और भगवान राम के नाम को उच्चारण करने की आवश्यकता नहीं परन्तु उनके जो कार्य हैं उनके अनुसार कार्य करने है। क्रांति को लाना है, महानता को लाना है तो आत्मविश्वासी बन जाओ, महानता में आ जाओ जिससे तुम्हारा जीवन ऊँचा बन जाएं और तुम यथार्थ क्रांति को ला सको, लाना चाहिए और आयेगी भी। ऐसा नहीं कि नहीं आयेगी। आयेगी अवश्य।31.07.1968

आधुनिक काल में प्रायः कहीं भाषा का विवाद है, कहीं मानवता का विवाद है। अरे? जब यहाँ स्वार्थवाद आ जाता है तो प्रायः मानव पराधीन हो ही जाता है। कि जब यहाँ स्वार्थ आया उसी काल में मानव मानव का पिपासी हो करके अपनी संस्कृति को दूर कर देता है। यदि मानव के द्वारा अपनी संस्कृति हो तो कोई कारण नहीं बन सकता की, हमारे पांडित्य को किसी प्रकार की हानि पहुंचाने के लिए कोई आ पहुंचे।

आगे चलकर के जब पश्चिम से प्राणी यहाँ आकर राज्य करने लगे इसी मध्य में एक आचार्य दयानन्द नाम के महात्मा आ गये। महात्मा दयानन्द ने क्या किया? उसको मानव को अपने हृदय से दूर नहीं होने देना चाहिए, क्योंकि महात्मा दयानन्द जी ने एक ही वाक्य कहा है कि जो तुम्हारी संस्कृति है परम्परा है, आदि ब्रह्मा से लेकर के जैमिनि पर्यन्त जो तुम्हारा सिद्धान्त कहता है उसी पर आ जाओ। यदि आ जाओगे तो शान्ति उत्पन्न होगी, महान साम्राज्यवादी बनोगे अन्यथा तुम्हारा जीवन यों ही नष्ट भ्रष्ट होता रहेगा। महात्मा दयानन्द ने अपने जीवन में कितना प्रयत्न किया परन्तु धर्म के ठेकेदारों ने उनको विष देकर नष्ट करने का प्रयत्न किया परन्तु वह तो विभूति थी, परम आत्मा थी, महान आत्मा थी उसको संसार का लेपन नहीं आया, द्रव्य का लेपन नहीं आया। जिस प्रकार भगवान श्रीकृष्ण के जीवन में द्रव्य का लेपन नहीं आया इसी प्रकार महात्मा दयानन्द के जीवन में किसी प्रकार की कुरीतियों का लेपन नहीं आया। अच्छाइयों की परम्परा बनी रही क्योंकि ऋषित्व और पाण्डित्व उनके जीवन का स्वतः

अधिकार रहा है। जिनका यह जन्मसिद्ध अधिकार होता है वहीं यहाँ संसार में कुछ उत्थान कर सकते हैं।

मुझे स्मरण है कि महात्मा दयानन्द की आत्मा के जो उद्गम विचार थे, वह पांडित्य से गुथे हुए वे कई जन्मों से चले आ रहे थे। यहाँ आकर के उन्होंने यवनों को दीर्घ वाणी से उच्चारण किया और जो यहाँ पश्चिम के राष्ट्र नेता थे उनको दीर्घ वाणी से कहा, अपने राष्ट्र में रहने वाले प्राणियों से कहा कि कहाँ जा रहे हो। आज तुम अपना समाज बनाओ, अपनी उन्नति करने का कोई साधन बनाओ। यह जो जातिवाद से ब्रह्मवाद चल रहा है, जातिवाद को नष्ट कर दो। यह जो जातिवाद की परम्परा है यह महाभारत काल के पश्चात की है इसे नष्ट करो। उनके द्वारा यौगिकता होने के नाते जैसे सूर्य प्रकाशवान रहता है ऐसे ही उनका जीवन मानव के हृदयों में प्रदीप्त रहता आया है और रहता रहेगा। हम उनका जितना आदर करते चले आये हैं वह हमारा हृदय जानता है। उनका महान आत्मा कितना सुन्दरा, कितना पवित्र, कितना मानवता से, ऋषित्व से, पांडित्य से गुथा हुआ था। उन्होंने आदि ब्रह्मा से जैमिनि मुनि तक के सिद्धान्तों को प्रकट किया उनके हृदय में वह कुंजी भी, उनका हृदय पुकार करके कहता था। समाज ने उसको अपनाने का प्रयास किया। अपनाया, क्रांति भी आई, उनके कारनामों का महान परिणाम भी हुआ।

परन्तु आधुनिक काल में उनके मानने वाले तर्कवाद पर आने के लिए तत्पर हो गये। जहाँ विचार विनिमय करना था वहाँ तर्कवाद आ गया। जहाँ जातिवाद को नष्ट करना था वहाँ जातिवाद में पारंगत हो गये हैं। जहाँ ऋषि दयानन्द की पद्धति का प्रश्न है, ऋषि दयानन्द की पद्धति नहीं, भगवान मनु जी की पद्धति कहती है कि जातिवाद नहीं होना चाहिए। जातिवाद क्या वस्तु है? मानवतावादी होना चाहिए। यह जातिवाद कैसे नष्ट हो? जब यहाँ ब्राह्मण, त्यागी और तपस्वी हों और वह ब्राह्मण प्रत्येक गृह में जा करके उत्तम समाज को एकत्रित करके यह कहे कि वर्तमान का समय यह कहता है और उसके अनुसार तुम्हें परिवर्तित होना होगा और नहीं होंगे तो भयंकर क्रान्ति मानव के निकट आती चली जा रही है। महात्मा दयानन्द के मानने वालों ने तर्कवाद को अपना

करके सिद्धान्त को त्यागा, यौगिक वाक्यों को त्याग दिया है। महात्मा दयानन्द की आत्मा भी अन्तरिक्ष में व्याकुल हो रही है कि यह मेरे मानने वाले पुजारी क्या कर रहे हैं। यह प्रायः हो रहा है। मैं आज उनका आदर करता हूं क्योंकि उन का कार्य कितना पवित्र, कितना महान, कितना पांडित्य का है। महात्मा शंकराचार्य की पुनीत आत्मा भी इसी प्रकार व्याकुल होती है परन्तु आज मैं कुरीतियों में नहीं जाना चाहता। आज के मानववाद को उन्नतशील बनाना है, विचारशील बनाना है, राष्ट्रवाद को उन्नत बनाना है तो परम्परा को अपनाना होगा अन्यथा यहाँ तो क्रान्ति होने वाली है ही। इसमें कोई संदेह नहीं।

तो मेरे हृदय में वेदना उत्पन्न होने लगती है और मेरी वह वेदना पुकार करके यह कहती है कि समाज कहाँ जा रहा है। यह भगवान राम का राष्ट्र जहाँ महाराजा हनुमान, नल नील जैसे वैज्ञानिक हुये कहाँ जा रहा है। यह भगवान श्रीकृष्णा का राष्ट्र कहलाया जा रहा है। भगवान श्रीकृष्णा ने अपने जीवन में कोई पाप नहीं किया। पाण्डित्य की दृष्टि से रहे, वैज्ञानिक दृष्टि से रहे, उनका जीवन कितना महान रहा है। आज उनके मानने वाले कहाँ जा रहे है। मुझे यहाँ बड़ा आश्चर्य होता है जब मैं इन वाक्यों का चिन्तन करता हूँ। तो मुझे एक वेदना रहती है। जब राष्ट्र के पूर्व विभाग में जाता हूं तो वहाँ मुझे अग्नि प्रदीप्त होती प्रतीत हो रही है। जब मैं दक्षिण के विभाग में आता हूं तो वहाँ भी मुझे ऐसा प्रतीत होता है यौगिक पक्रियाओं से जैसा समुद्रों से अग्नि प्रारम्भ होने जा रही है। यह अग्नि क्या करेगी? यह अग्नि मानवत्व को नष्ट करती चली जाएंगी।

यह राष्ट्र कैसे उन्नत हो यह प्रश्न है हमारे समक्ष है। उन्नत होना चाहिए परन्तु ब्राह्मणों के द्वारा होगा? आधुनिक काल का जो ब्राह्मण समाज है वह किस प्रकार का है। मैं आज उसकी निंदा करने नहीं जा रहा हूं। केवल वास्तविक जो दशा है उसको प्रकट करने जा रहा हूं आज ब्राह्मण समाज कहीं पदों की लोलुपता से अपने को नष्ट करता चला जा रहा है, वहीं अभिमान की मात्रा है। अरे! परमात्मा के राष्ट्र में, परमात्मा की विद्या से अपने को नष्ट करता चला जा रहा है चिन्तन करने वाले को ब्राह्मण कहते हैं और

जो ब्रह्म का चिन्तन करता है, ब्रह्म विद्या का चिन्तन करता है यदि उसे अभिमान आ गया तो उसके द्वारा तपस्या का लेश मात्र भी चिन्तन उसके मन में नहीं होता क्योंकि पांडित्य वहीं होता है जिसमें अभिमान नहीं होता। परमात्मा कहाँ रहता है? परमात्मा को न मान है और न अपमान है। इसी प्रकार ब्राह्मण उसी काल में कहलायेगा जब उसे न मान रहेगा न अपमान। इसी प्रकार आज हमें विचार विनिमय करना है कि यहाँ ब्राह्मणों का एक समाज होना चाहिए। त्यागी और तपस्वियों का समाज जब राजा तक पहुंचेगा और राजा से कहेगा कि हे राजन्! हमने यह अपना विधान बनाया है, हमारे दर्शनों का सिद्धान्त राष्ट्र की पद्धति यह कहती है तुम उसको क्यों नहीं स्वीकार करते हो। जब ब्राह्मण अपने हृदय के उद्गार को इतना विचित्र बना लेता है तो राजा उन वाक्यों को स्वीकार कर ही लेता है।

आज तो मैं केवल यह उच्चारण करने चला हूं कि महात्मा दयानन्द ने एक सभा बनाई थी। परन्तु उस सभा में भी जब उदर की पूर्ति करने का प्रश्न आया तो वह भी छिन्न भिन्न होने लगी, उसमें भी पांडित्य नहीं रहे पांडित्य तब होता है जब पांडित्य के साथ में योग होता है, योग की सूक्ष्मता है। योगी कहते तो अवश्य हैं परन्तु वास्तव में योग होता नहीं। पांडित्व के साथ में योग होता है तो त्याग की प्रवृत्ति आ जाती है। यह आज के समाज में सूक्ष्मता है। इसको उन्नत बनाना यह सब महापुरूष का कार्य होता है। आयेगा कोई पुरूष। मेरी तो यह वेदना होती है कि कोई पुरूष आयेगा इसी वेदना को लेकर के और इसको उन्नत अवश्य बनायेगा।06.03.1969

महात्मा दयानन्द ने एक वाक्य कहा था राष्ट्र में अराजकता नहीं होनी चाहिए और सब प्रजा को सुगठित विचार बनाने चाहिए, आर्यो का समाज होना चाहिए, सुगठित विचार अपने प्रकट होने चाहिए, वाद विवाद से रहित होना चाहिए, परन्तु मैं क्या करूं जब मैं महात्मा दयानन्द के उन वाक्यों को विचार विनियम करता हूँ तो हर्ष के कारण बहुत दूरी चला जाता हूँ। परन्तु जब उनके मानने वालों के विचारों में जाता हूँ तो ऐसा प्रतीत होता है कि महात्मा दयानन्द के विचार कहाँ चले गए? कहाँ गई वह वेदी, ? सुगठित होने की वैदिकता और आर्यता कहाँ चली गई? यहाँ आर्यता नहीं अनार्यता आ गई है,

अनार्यता का परिणाम क्या है? वह भयंकर अग्नि है और कुछ नहीं सकता हो जहाँ महात्मा दयानन्द के मानने वालों में सुगठित विचार था, महानता थी, वैदिक परम्परा के विचार थे, वहाँ ऐसा विवाद उत्पन्न हो गया है, कि भयंकर अग्नि उनके अन्तःकरण में प्रदीप्त होने जा रही है। वह कैसी घृणा की अग्नि है, जैसे मानव की आत्मा चले जाने के पश्चात् अग्नि भस्म कर देती है परन्तु घृणा रूपी जो अग्नि होती है यह मानव के अन्तःकरण को निगलती चली जाती है और ऐसे निगल जाती है जैसे समुद्र में नदियां अर्पित हो जाती हैं। ऐसे मानव का शुक्र हनन होता चला जाता है। पुण्य ही नष्ट हो जाता है।

हे मानव! आज तू महात्मा दयानन्द का पुजारी बनना चाहता है तो घृणा न कर, तू घृणा की वेदी को मत अपना, घृणा से तेरे मानव जीवन का विनाश होता है, आवागमन की परम्परा बनती है, न जाने आगे चल करके तुम कौन सी योनि में प्रविष्ट हो जाओगे। यह कुछ नहीं कहा जा सकता। प्राचीन आर्यों ने तो नाग तथा हूण आदि जातियों को अपना लिया था।

महात्मा शंकर ने अपने कैसे उत्तम विचार दिए परन्तु उनमें जातिवाद की प्रतिभा ओत प्रोत हो गई। मुझे यह संसार, यह राष्ट्र स्मरण आता रहा है। राष्ट्र में एक नियम यह होना चाहिए कि एक दूसरे मानव से घृणा नहीं होनी चाहिए। वास्तव राजा के राष्ट्र में इस प्रकार का नियम तो है। परन्तु उसको क्रियात्मक में नहीं लाया जा रहा है। इसका मूल कारण क्या है? स्वार्थवाद, इसका मूल कारण है अपने को उच्च स्वीकार करना। प्रभु की सृष्टि में मानव मानव से घृणा करना। यह मानव का बड़ा दुर्भाग्य होता है संसार में, मुझे इस आर्यावर्त का परम्परा से साहित्य स्मरण आता रहता है। दूसरे राष्ट्रों से प्रजा आती घृणा को लेकर के आते है यहाँ के आर्य पुरुष उन को अपने में अपना लेते थे। जैसे हमारे यहाँ नाग जाति आई, हूण आए। परम्परा से आते चले गए। उन सब को हमारे महापुरुषों ने अपने में अपना लिया। एक कुक नाम की जाती आई, उनकी जातीयता हमारे ही पन में आर्यावर्त में परिणत हो गयी। भगवान राम के काल में समुद्रों के दूरी से भी नाना जातियां आई वे सभी इसमें परिणत हो गई। आर्यों के

अपनाने के पवित्र कार्य को विदेशी सम्प्रदायों ने अपना लिया।

जो आर्यों का कार्य था वह विदेशी व्यक्तियों ने अपना लिया। वे तो महान बन गए वे तो महानता की विचारधारा को अपनाते हैं। और इन्होंने अपनी विचारधारा को त्याग करके अपने आर्यावर्त्त और वैदिकता को ऐसे नष्ट करते चले जा रहे हैं जैसे सांयकाल का सूर्य अस्त हो रहा है। यह वैदिकता किस काल तक चलती रहेगी? यह वैदिकता अधिक काल तक नहीं चलेगी, कुछ काल में वैदिकता का सूर्य अस्त हो जाएगा, यदि यही कार्य तुम्हारा चलता रहा तो। आचार्य शंकर, ऋषि दयानन्द और महात्म नानक के अनुयायियों! अनार्यत्व को रूढ़िवाद तथा घृणा को त्यागो।

अरे! दयानन्द के विचार वालो! आचार्य शंकर के विचार वालो! यदि तुम्हारा यह विचार चलता रहा तो यह संसार रूढ़िवाद की अग्नि में परिणत हो जाएगा। अरे नानक के विचार वालो! महात्मा नानक के विचार कब तक रहेंगे इस संसार में? किस काल तक रहेंगे? आर्यत्व नष्ट हो जाएगी, कब तक रहेंगे तुम्हारे महापुरुषों के विचार भी? ऐसे दग्ध हो जाएंगे जैसी अग्नि ईधन को भस्म कर देती है।

आज संसार में आग्नेय अस्त्रों को बनाया जा रहा है। परन्तु मानवता नहीं बनाई जा रही है यह संसार का दुर्भाग्य नहीं तो और क्या है? एक दूसरे के नष्ट करने वाले, यन्त्र तो बनाए जा सकते हैं। परन्तु एक दूसरे को प्राण की सत्ता देने की क्षमता वाले यन्त्र भी होने चाहिए। जिससे महत्ता उस मानव के मस्तिष्क में प्रबल होती चली जाए और ऐसी अग्नि प्रदीप्त होती चली जाए, जिस अग्नि के द्वारा आज हम, अपने आर्यत्व को अपनाते चले जाए, । महात्मा दयानन्द के हृदय में एक ऐसी दाह थी ऐसी एक भयंकर अग्नि उनके मस्तिष्क में थी कि आज संसार यदि मेरा राष्ट्र हो जाए तो मैं सबसे प्रथम अपने उन भ्राताओं को अपने अंग और अपने कंठ में धारण करता चला जाऊ। उनका यह विचार कहां है उन महापुरुषों का विचार उनके साथ ही चला गया। यहाँ तो पद की लोलुपता में भयंकर अग्नि में मानव परिणत होता चला जा रहा है। आज के समाज को विचार विनिमय करना है। महात्मा शंकर के मन में सब को वैदिक मत के अनुयायी बनाने की प्रबल अभिलाषा थी।

महर्षि दयानन्द पृष्ठ 45 से 51

महात्मा शंकराचार्य के मस्तिष्क में एक भयंकर अग्नि थी, दाह थी, कि मेरा राष्ट्र मेरा समाज होना चाहिए और धर्म होना चाहिए, और वैदिकता होनी चाहिए जिस वैदिकता को अपनाने से हमारे जीवन में एक महानता का दिग्दर्शन होता है।, इसलिए मानव को विचारना है कि आज द्रव्य को धर्म में परिणत कर दो द्रव्य तुम्हारा पाप से विंधा हुआ नहीं होना चाहिए।

आज के संसार ने द्रव्य का किस प्रकार पाप से छेदन कर दिया है। मैं तो पूजनीय गुरुदेव की शरण में आने के पश्चात् उनके विचारो के अनुकूल चलना बहुत अनिवार्य होता है। महान आर्य परम्पराओं को अपनाने के लिए प्रीति तथा अपनेपन को जीवन में उतारो। हम अपने मानव जीवन को ऊँचा बनाने का प्रयास करें और उस महान परम्परा को अपनाने के लिए तत्पर होते चले जांए, जिससे एक महान क्रान्ति आ जाए, क्षत्रियत्व आ जाए, राष्ट्रीयता आ जाए। क्योंकि राष्ट्रीयता उसी काल में आती है जब प्रजा में प्रीति होती है, अपनापन होता है। जब प्रजा आहार कहीं का ग्रहण करती है और गुणगान कहीं के गाती है तो वह राष्ट्र नहीं होता। एक काल में वह राष्ट्र श्मशान भूमि बन कर के रहता है।

हमारे यहाँ विज्ञान परम्परा से रहा है। राजा के राष्ट्र में नियम सुन्दर होने चाहिए। वानप्रस्थियों को ब्रह्मचारियों को उपदेश देने चाहिए। शिक्षालयों में वानप्रस्थी होने चाहिए। जो अपना विचार दे सकें। क्रियात्मक विचार उनका रहा है। उनका कियात्मक जीवन ब्रह्मचारियों को अनुभव करा सकें। पाठय पुस्तक भी उनके द्वारा सुन्दर होनी चाहिए। जैसे कपिल सिद्धान्त है। कणाद सिद्धान्त है जैमिनी सिद्धान्त है, व्यास सिद्धान्त है। इन वाक्यों को ब्रह्मचारियों को देना चाहिए। ऐसे विचार और भी नाना पुरुषों की लेखनियां बद्ध होती रहनी चाहिए। तभी तो राजा का राष्ट्र पवित्र होता है। इसके पश्चात् मानव के द्वारा अपने में प्रीति की दाह होनी चाहिए। मानव तो प्रभु का बनाया हुआ है जातीय सम्पदा मानव के द्वारा कुछ नहीं होती। मानव को मानव से प्रीति होनी चाहिए, स्नेह होना चाहिए। विचारों में एक वैदिकता होनी चाहिए अशुद्ध वाक्य हो उसको भी बुद्धिमता से नष्ट कर देना चाहिए। सब जितनी पोथी हैं इनका जो उत्तम एक विचार है। उनमें

वैदिक भी विचार होते हैं उन सब विचारों को एकत्रित करके एक धर्म की परम्परा होनी चाहिए। उसी के आधार पर राष्ट्र और समाज और ब्राह्मण समाज अपने राष्ट्र को ऊँचा बना सकते है।01.08.1970

आज वह दिवस है जब यहाँ से एक महापुरुष को कागा प्रकृति वाले प्राणियों ने विष देकर के त्वचा में रक्त की धारायें प्रवाहित कीं। और आज के दिवस गायत्राणी छन्दों का पठन पाठन करते हुए उन्होंने अपने शरीर को त्याग दिया था। वह यथार्थ ऋषि आ करके और हमारे समीप एक महान् साधु बन करके सत्यता का उपदेश देकर चला गया। हमें आज के दिवस को कदापि नहीं त्याग देना चाहिए। हमारे महापुरुष नष्ट नहीं होते। उनके शरीर के परमाणुओं का विच्छेदन हो जाता है। और विच्छेदन हो करके वे परमाणु अन्तरिक्ष में रमण कर जाते हैं जीवात्मा उन प्रवृत्तियों में रमण कर जाती है जो उनके संकलन होते हैं। उनके अन्तःकरण की धाराएं होती।अज्ञात तिथि

दीपावली के दिवस हमें अपना संकल्प धारण करना चाहिए। हम महात्मा दयानन्द की, महात्मा शंकर की वार्त्ताओं को स्वीकार कर, अपने जीवन को उन्नत बना सकते हैं। क्यांकि शंकराचार्य ने वैदिकता के लिये अपने जीवन की आहुति दे दी। महात्मा दयानन्द ने अपने जीवन की आहुति प्रदान कर दी। किसलिये? केवल वेद की प्रतिभा के लिये। वेद के जीवन के लिये, मानव को सदैव कटिबद्ध रहना चाहिए। आज मानव संसार के मानवता के प्रवर्त्तक कहलाये गये। ईश्वर की प्रेरणा के आधार पर जिनका हृदय और मस्तिष्क दोनों वेदना से परिणत हो जाता है, भरण हो जाता है वे मानव संसार के प्रलोभनों में नहीं आते हैं। सदैव संसार के द्रव्यवाद से उनका जीवन बहुत ऊँचा होता है, विशाल होता है, महत्ता वाला होता है। इसीलिए आज हमें उनके पदचिन्हों पर चलना चाहिए। उन्हीं की धाराओं को अपनाना चाहिए। यदि मैं आज ऋषि दयानन्द के मानने वालों के विचार प्रकट करने लगूंगा तो संसार यह कहेगा कि यह क्या उच्चारण करने लगे हैं। महात्मा दयानन्द ने अपने विचार तो यथार्थ दिये हैं परन्तु उनके मानने वाले तो ऐसे अशुद्ध मार्ग में ऐसे स्वार्थवाद में परिणत हो गये हैं कि उन में न द्रव्य का त्याग हैं न जीवन का त्याग है। जिस त्याग के लिये ऋषि दयानन्द ने अपना बलिदान

किया अपनी जीवन की धारा को त्याग दिया। अरे! केवल प्राणी के उच्चारण करने से संसार ऊँचा नहीं बनता या धर्म और वेद ऊँचा नहीं बनता। वेद उस काल में ऊँचा बनता है जब मानव अपने जीवन को क्रियात्मक बनाता है और महान बनाता है।

मुझे स्मरण आता रहता है। भगवान राम का जीवन कितना क्रियात्मक था। भगवान कृष्ण का जीवन संसार में कितना क्रियात्मक रहा था। आज जिनका जीवन क्रियात्मक रहा है उन्हीं के जीवन में एक महत्ता आई है। संसार के लोकप्रिय बनकर के, राष्ट्र के क्या, विश्व के लोक प्रिय बन करके वे संसार सागर से पार हो जाते हैं। ऋर्षि दयानन्द ने एक वाक्य कहा कि बुद्धि के अनुसार संसार की प्रत्येक विद्या को अपनाने का प्रयास करो। उसी को अपनाना हमारा धर्म और मानवता कहलाती है। वह वेद की प्रतिभा जो अन्तःकरण की प्रेरणा है उसी के आधार पर अपने कार्य को करते चले जाओ।'' तुम्हें अपने सदाचार मानवता और वेद की प्रतिभा को अपनाना होगा। संसार के लोगों की संस्कृति से ओत प्रोत करना होगा।19.70.1970

मैं यह दृष्टिपात करता हूं कि वेद का अपमान कौन करता है? वेद का अपमान वह प्राणी करता है जो प्राणी रूढ़िवाद में परिणत हो जाता है और अपने मस्तिष्क में विचार विनिमय नहीं करता है। वह प्रकाशक का प्रायः विरोधी होता है। जिसकी रूढ़ि बन जाती है वह अपनी मानवता का हनन कर देता है, धर्म की परम्परा को नष्ट कर देता है। इसी प्रकार हमारे यहाँ जितना पठन पाठन किया जाता है उस पठन पाठन के आधार पर हमें विचार विनिमय करना है कि हम अपनी मानवता को कहाँ ले जाना चाहते हैं। परन्तु मेरा तो एक ही वाक्य रहता है कि रूढ़िवाद को त्याग देना चाहिए और अनुसन्धानवेत्ता बनना चाहिए। वेद के प्रकाश की छत्रछाया में मानव को आ जाना चाहिए, जिसमें पक्षपात नहीं है जिसको हमारे यहाँ ईश्वर की वाणी कहा जाता है। यज्ञ में जब विराजमान होते हैं तो यज्ञमान को चाहिए कि अपनी रूढ़ियों को त्याग दे, क्रोध की रूढ़ि को, द्वेष की रूढ़ि को। अपनी महान वाणी और मस्तिष्क को सन्तुलन में करे। 13 02 1971

हे मेरी प्यारी माता! तू अपने गर्भ से ऊँची संतान को जन्म दे। यदि तू ऊँची सन्तान को

जन्म नहीं दे सकेगी तो तेरा श्रृंगार नष्ट होता रहेगा। मैं आपको निर्णय कराना चाहता हूं जब संसार में माता कौशल्या होती है तो राम जैसी पुनीत आत्मा अन्तरिक्ष में से आ जाती हैं और जब माता स्नेहलता होती हैं तो स्नेहलता के गर्भ से दयानन्द जैसी आत्माओं का जन्म होता है। इसी प्रकार महात्मा शंकाराचार्य का रूक्षि रानी माता के गर्भ से जन्म होता है। यह संसार तब तक ऊँचा बनता है जब मेरी माता सुचरित्र व्रता होती है, पतिव्रता होती है। तो हे मेरी माता! जब तेरे गर्भ से उत्पन्न हुआ बालक ही यदि तेरी ही जातीयता को किसी की पुत्री के ऊपर कुदृष्टि करता है तो यह दोष किसका? यह मेरी माता का ही दोष है क्योंकि माता ने अपने गर्भस्थल में सुन्दर निर्माण नहीं किया। माता भी दुखित रहती है। परन्तु इसका मूल कारण यह कि अपने गर्भस्थल को ऊँचा बनाना, महान बनाना पवित्र बनाना यह मेरी प्यारी माता का पवित्र कर्त्तव्य होता है। माता के मन और प्राण को सुचारू रूप में सुन्दर बनाना है।13.02.1971

ऋषि दयानन्द ने कहा कि जहाँ प्राणी को अन्न प्राप्त नहीं होता, केवल मांस ही मांस प्राप्त होता है, वहाँ प्राणियों को नहीं रहना चाहिए। उनका कितना ऊँचा आदेश था। आज उनका जो अनुयायी समाज है वह यज्ञवेदी पर विराजमान होता है परन्तु संकल्प में बद्ध नही रहता है। पर गृहों में नाना प्रकार के गर्भों को पान किया जाता है। कहाँ है वह ऋषि का विचार? परन्तु युवक समाज में विज्ञान नहीं है।18.08.1972

ऋषि दयानन्द ने कहा जब राजा धर्म से पिरोया हुआ होगा। प्रजा भी धर्म से पिरोई हुई होगी। जब ब्राह्मण समाज धर्म से पिरोया हुआ होगा, उस समय यह समाज पवित्र बन जाता है। जहाँ राष्ट्रवाद में यह घोषणा की जाती हो कि हम निरपेक्ष बन गए हैं। परन्तु निरपेक्षता किसे कहते हैं? निरपेक्षता उसे कहते हैं जिसका हृदय विशाल है वही तो संसार में निरपेक्षता की वार्ता प्रकट कर सकता है। और जहाँ उनके मन में कुछ है और बाह्य जगत में कुछ ओर है। वे संसार में निरपेक्ष शब्द उच्चारण करने के अधिकारी नहीं होते।अज्ञात तिथि

मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे महर्षि अटूटी महाराज का विवरण दिया कि वह देवयान

में रमण करते थे जिनके जीवन की कुछ घटनाएं प्राप्त होती हैं। महर्षि अटूटी की माता का नाम सोमवती था जो महर्षि कोलशती की पत्नी थी। उन्होंने अपने जीवन में सोचा कि मेरा पुत्र देवयान में विचरने वाला हो। पुत्र उत्पन्न होने के पश्चात् माता ने सोचा कि मैं तो अपने बालक को अटूटी नाम से उच्चारण करूंगी, जिसकी परमात्मा में अटूट धारणा हो तो देवताओं के लिए अपने पुत्र को अर्पण करती हूँ। उस समय उस बालक अटूटी ने माता के महान आदेशों को पालन करके ब्रह्मचारी बन करके देवयान का प्रयत्न किया। धारणा ध्यान समाधियों में संलग्न होकर, इस अन्तरिक्ष को और तीनों प्रकार की वायु से जैसा मैंने पूर्वकाल में कहा है कि जैसे सोमहित, मध्यान और इन्द्र वायु हैं, ऊपर के स्थान में जिसको देवयान कहा जाता है उसमें विचरने वाले बने। माता ने उनको आदेश दिया था कि यह वेद, देव की अमूल्य निधि है। हे पुत्र! जब जब यह लुप्त हो जाए तू इसको ऊँचा बनाना। तो उस बालक ने इस अमूल्य निधि को जानकर देवयान में रमण किया। इसके पश्चात् जैसा मुझे मेरे प्यारे महानन्द जी से सूचना मिली है कि उन्होंनें इस कलियुग में आकर माता के गर्भ में जन्म लिया और जन्म पा करके ऋषि दयानन्द बनके संसार को ऊँचा बनाने का प्रयत्न किया।

तो एक समय माता सीता बाल्यकाल में महर्षि अटूटी मुनि महाराज के द्वार पर विद्यमान थी। था अटूटी मुनि ने यह कहा, कि जो मानव गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो, उसे जागरुक नहीं करना चाहिए, जब मैं अपने पति को या अपने विधाता को, मैं कैसे जागरुक करुँ? क्योंकि एक स्थली पर यह सिंहराज आ रहा है यह हमें आहार न कर जाए।

एक समय महर्षि अटूटी ऋषि महाराज से, श्वेतुऋषि ने यह प्रश्न किया कि भगवन! वेद मन्त्र में आता है कि माता, अपने गर्भ के शिशु से वार्ता प्रगट करती है। तो उन्होंने कहा भई! इसको तो मैं नहीं जानता, चलो, हम गमन करते है तो महर्षि यास्काचार्य के द्वार पर पहुँचे और महर्षि यास्काचार्य से जब यह प्रश्न किया गया, क्या माता अपनी गर्भ की आत्मा से विष्णु बन करके, वह वार्ता प्रगट करती है। तो यास्काचार्य ने कहा, जो माता विवेकी होती है जो माता अपने उद्देश्य को जानती है वह माता अपनी गर्भ की आत्मा

से वार्ता प्रगट कर लेती है और वह कैसे करती है? माता जब विदुषी होती है और विदुषी ज्ञानवान माता अन्तर्मुखी हो जाती है।

भगवन्! इस काल में एक दयानन्द नाम के आचर्य आ पहुँचे। गुरुदेव! हमने तो कुछ ऐसा अनुभव किया है कि द्वापरकाल में जो महर्षि अटूटी थे उनकी आत्मा ने आ करके ऋषि दयानन्द के शरीर में प्रवेश किया। यह संसार बड़ा अधोगति में चला जा रहा था। उन्होने माता पिता का ऐश्वर्य त्याग दिया और पूर्व ऋषियों का जो मार्ग था अपनाया।

28.07.1963

ईश्वरीय सृष्टि के अद्भुत व्याख्याता पूज्यपाद गुरुदेव

श्रृङ्गी ऋषि कृष्णदत्त जी महाराज प्रवचन मुद्रा में

पूज्यपाद गुरुदेव श्रृङ्गी ऋषि कृष्णदत्त जी महाराज, इस जन्म में अपठित रहे। परन्तु शरीर के शवासन की मुद्रा में समाधिस्थ होने पर, पूर्व जन्मों में अर्जित ज्ञान की उद्‌बुद्धता के आधार पर, देवयान की आत्माओं को सम्बोधित प्रवचनों में, वैदिक संस्कृति का उज्ज्वलतम स्वरूप और मानव जीवन को दिव्यता देने वाला अमृतमय ज्ञान समाया हुआ है। उन्हीं दिव्य प्रवचनों में पूज्यपाद गुरुदेव श्रृङ्गी ऋषि कृष्णदत्त जी महाराज ने ओ३म् के महत्त्व का प्रतिपादन किया है। ओ३म् के उसी महत्त्व को संकलित करके इस पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है।

श्रृङ्गी ऋषि वेद विज्ञान प्रतिष्ठान

नई दिल्ली-110085